TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL LIBRARY
OU_186169
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—707—25-4-81— 10,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H398.8 D48R Accession No. P.G. H6518

Author देवड़ा, हनुमन्तसिंह, संपा.

Title राजस्थानी लोक साहित्य में विरह प्रकृति और भक्ति. n.d.

This book should be returned on or before the date last marked below

राजस्थानी लोक साहित्य में—

विरह प्रकृति और भक्ति

★

सम्पादक

हनुमन्तसिंह देवड़ा

★

साहित्य-संस्थान

राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर

प्रकाशकः—

साहित्य-संस्थान
राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर

मूल्य २॥)

मुद्रकः—
विद्यापीठ प्रेस, उदयपुर

वक्तव्य

साहित्य-संस्थान राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर विगत २१ वर्षों से उदयपुर और राजस्थान में साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक कलात्मक सामग्री एवं शिलालेखों की शोध खोज, संग्रह, संपादन और प्रकाशन कार्य करता आ रहा है। विशेषकर साहित्य-संस्थान ने राजस्थान में यत्र तत्र बिखरे हुए प्राचीन साहित्य, लोक-साहित्य, इतिहास पुरातत्व और कला विषयक वस्तुओं को प्राप्त करने के लिये निरन्तर प्रयत्न किया है। परिणाम स्वरूप लगभग ४० महत्त्वपूर्ण और उपयोगी ग्रन्थों का प्रकाशन होचुका है। साहित्य-संस्थान के अन्तर्गत निम्न लिखित विभाग गतिशील हैं—

(१) प्राचीन साहित्य-विभाग,
(२) लोक साहित्य-विभाग,
(३) इतिहास पुरातत्व-विभाग,
(४) अनुसन्धान पुस्तकालय एवं अध्ययन गृह,
(५) संग्रहालय-विभाग,
(६) राजस्थानी प्राचीन साहित्य-विभाग,
(७) पृथ्वीराज रासो एवं राणा रासो-सम्पादन संशोधन विभाग
(८) भील साहित्य-संग्रह-विभाग,
(९) नव साहित्य-सृजन-विभाग,
(१०) संस्थानीय मुख पत्रिका-'शोध पत्रिका' संपादन विभाग,
(११) संस्कृत-'राज प्रशस्ति' ऐतिहासिक महाकाव्य सम्पादन विभाग,
(१२) प्राचीन कला प्रदर्शनी विभाग,

इनके अतिरिक्त 'सामान्य विभाग' के अन्तर्गत अन्यान्य कई प्रवृत्तियाँ चलती रहती हैं, उनमें मुख्य २ ये हैं:—

(१) महाकवि सूर्यमल आसन' भाषण माला
(२) म० म० डा० गौरीशंकर 'ओझा आसन' ,,
(३) उपन्यास सम्राट् प्रेमचद आसन' ,,
(४) निबन्ध-प्रतियोगिताएँ.
(५) भाषण प्रति योगिताएँ,
(६) कवि सम्मेलन,
(७) साहित्यकारों एवं महाकवियों के जयन्ति-समारोह ।

इस प्रकार साहित्य-संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर अपने सीमित और अत्यल्प साधनों से राजस्थानी साहित्य. संस्कृति और इतिहास के क्षेत्रों में विभिन्न विघ्न बाधाओं के होते हुए भी निरन्तर प्रागतिक कार्य कर रहा है। राजस्थान के गौरव-गरिमा की महिमामयी झाँकी अतीत के पृष्ठों में अंकित है; पर आवश्यकता है उसके पृष्ठों को खोलने की। साहित्य-संस्थान नम्रता के साथ इसी ओर अग्रसर है और प्रस्तुत पुस्तक साहित्य-संस्थान के तत्त्वावधान में तैयार करवाई गई है।

साहित्य-संस्थान के संग्राहकों ने अनेक स्थानों में घूम घूम और ढूँढ ढूँढ कर २२००० के लगभग छन्दों का और प्राचीन हस्त लिखित अनेक उपयोगी ग्रंथों का भी संग्रह किया है। इनमें विविध प्रकार के प्राचीन छन्द सुरक्षित हैं। विभिन्न प्रकार की ऐतिहासिक घटनाओं एवं व्यक्तियों आदि का वर्णन मिलता है। ये विभिन्न प्रकार के गीत और

छन्द लाखों की संख्या में राजस्थान के नगरों, कस्बों एवं गाँवों में बिखरे पड़े हुए हैं। इनके प्रकाशन से एक ओर साहित्यकारों को राजस्थानी साहित्य का परिचय मिल सकेगा, तो दूसरी ओर इतिहास सम्बन्धी घटनाओं पर भी प्रकाश पड़ेगा। साहित्य-संस्थान राजस्थान में पहली संस्था है, जो शोध-खोज के क्षेत्र में नियमित काम करती चली आरही है।

इस प्रकार के संग्रह अब तक कई निकाले जासकते थे; किन्तु साधन सुविधाओं के अभाव में साहित्य-संस्थान विवश था। इस वर्ष प्राचीन राजस्थानी साहित्य और लोक साहित्य के प्रकाशनार्थ भारत सरकार के शिक्षा-विकास सचिवालय ने साहित्य-संस्थान के लिये कृपा कर ५७,०००) सत्तावन हजार रुपयों की योजना स्वीकार की है। इसी योजना के अन्तर्गत प्रस्तुत पुस्तक का भी प्रकाशन कार्य सम्पन्न हो सका है। ऐसे २ उपयोगी कार्यों को प्रकाश में लाने के कारण हमारी सरकार के गौरव में ही वृद्धि हुई है।

इस सहायता को दिलाने में राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय श्री मोहनलालजी सुखाड़िया और उनके शिक्षा सचिवालय के अधिकारियों का पूरा २ योग रहा है। इसके लिये हम उनके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। साथ ही भारत सरकार के उपशिक्षा सलाहकार डा० डी० पी० शुक्ला, डा० मान तथा श्री सोहनसिंह एम. ए. (लन्दन) के भी अत्यन्त आभारी हैं, जिन्होंने सहायता की रकम शीघ्र और समय पर दिलवा दी। सच तो यह है कि उक्त महानुभावों की प्रेरणा

और सहायता से ही यह रकम मिल सकी है और संस्थान अपने ग्रन्थों का प्रकाशन करवा सका है। भारत सरकार के राज्यशिक्षा मन्त्री डा० कालूलालजी श्रीमाली के प्रति किन शब्दों में कृतज्ञता प्रकट की जाय? यह तो उन्हीं का अपना कार्य है। उनके सुझाव और उनकी प्रेरणा से संस्थान के प्रत्येक कार्य में निरन्तर विकास और विस्तार होता रहा है और भविष्य में भी होता ही रहेगा। इसी आशा और विश्वास के साथ हम उनका हृदय से आभार मानते हैं।

हमें विश्वास है कि हमारी भारत सरकार एवं राजस्थान सरकार इसी प्रकार साहित्य-संस्थान की प्रवृत्तियों के लिये सहायता एवं सहयोग देकर हमारे उत्साह को बढ़ाती रहेंगी, जिससे इस महान् देश की सांस्कृतिक प्राणभूत प्रवृत्तियों के द्वारा राष्ट्रीय चिर स्थायी कार्य किये जासकें।

हम उन सब सज्जनों और विद्वानों के भी आभारी हैं, जिन्होंने इस कार्य के संकलन, सम्पादन और संशोधन में सहयोग एवं सहायता दी है।

विनीत
मोहनलाल व्यास शास्त्री
मंत्री
साहित्य-संस्थान

विनीत
भगवतीलाल भट्ट
अध्यक्ष
साहित्य-संस्थान

दो शब्द

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के स्वाभाविक परिणामों में सांस्कृतिक नवोन्मेष भी एक है। आज युगों से उपेक्षित लोक संस्कृति को राज्याश्रय और अभिजात वर्ग की मान्यता मिली है। लोकगायकों, नर्तकों और कलाकारों की समय समय पर पूछ हो रही है। साहित्यिकों, रसमर्मज्ञों और कला-पारखियों का ध्यान लोक में बिखरी हुई सामग्री की ओर आकर्षित हो रहा है। पत्र-पत्रिकाओं के पृष्ठों में भी लोक संस्कृति की चर्चा हो रही है। लोक कलाओं के समारोह संभ्रात व्यक्तियों की उपस्थिति से सम्मानित हो रहे हैं। राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में लोक की पुनर्प्रतिष्ठा भारतीय जनतन्त्र की गरिमा का विषय बन रही है।

लोक जागरण की इस बेला में साहित्यकारों और साहित्यिक संस्थाओं का भी अपना विशेष दायित्व है। जन-जन के मुख में विराजमान लोक-सरस्वती को भावी पीढ़ियों के लिए लिपिबद्ध कर मूर्त्तिमन्त करने की आवश्यकता का अनुभव उन्हें हो रहा है। गीत, कथा, कहावतें, मुहावरे आदि अनेक प्रकार का लोक साहित्य पुस्तकों के रूप में सामने आता जा रहा हैं। यह एक शुभ लक्षण है। पाश्चात्य साहित्य, कला और संस्कृति के रंग में रंगे हुए भारतीय समाज को उनके अपने पुरातन वैभव से परिचित करा

कर उनके मानस का नये रूप से शुद्धीकरण करना है। भारतीय जनता के रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार और उनकी आत्मा को समझने के लिए उनकी लोक संस्कृति का अध्ययन जितना आज आवश्यक हो गया है उतना सम्भवतः पहिले कभी नहीं रहा। यदि भारतीय जनतन्त्र को सही अर्थ में जनसाधारण तक पहुँचाना है तो उनके चारों ओर के वातावरण की पूरी जानकारी अपेक्षित है। लोक संस्कृति का अध्ययन ही इसका एक-मात्र माध्यम है। इस प्रकार लोक साहित्य का प्रकाशन अपने आपमें महत्वपूर्ण सिद्धि का साधन भी बन गया है। यही कारण है कि लोक साहित्य के प्रकाशनों का सर्वत्र स्वागत हो रहा है।

राजस्थान मे लोक साहित्य के प्रकाशन का इतिहास विशेष पुराना नहीं है। यद्यपि इसका श्री गणेश आज से २०-२२ वर्ष पहिले ही हो गया था, जब श्री गणपति स्वामी तथा श्री सूर्यकरण पारीक के प्रयत्नों से 'राजस्थान के लोकगीत' नामक संग्रह ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ, पर स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इस ओर विशेष रूचि का प्रदर्शन हुआ है। लोक कथाओं, लोकगीतों तथा कहावतों आदि पर बहुत कुछ नयी पुरानी सामग्री पत्र-पत्रिकाओं में और पुस्तकों के रूप में सामने आई है। प्रकाशनों की इस शृंखला में उदयपुर स्थित राजस्थान विद्यापीठ ने भी कई कड़ियाँ जोड़ी है। प्रस्तुत पुस्तक भी उन्हीं में से एक है।

श्री हणूंत सिंघ देवड़ा राजस्थानी साहित्य के सच्चे प्रेमी और रसज्ञ हैं। स्वयं कवि होने के कारण काव्य की आत्मा तक पहुँचने की इनकी सामर्थ्य है। राजस्थानी लोकगीतों के इस सराहनात्मक संकलन में

इन्होंने लोकगीतों के चुनाव में अपने कवि की अन्तर्दृष्टि से काम लिया है। पुस्तक के अनेक गीत ऐसे हैं जो अन्यत्र संग्रह-ग्रन्थों में प्रकाशित नहीं हुए हैं। पर गीतों का नया-पुरानापन ही किसी प्रकाशन की अच्छाई की एकमात्र कसौटी नहीं है। पाठ्यसामग्री का चुनाव सुरुचिपूर्ण और आकर्षक होना इससे कहीं अधिक आवश्यक है। उपर्युक्त दोनों दृष्टियों से ही पाठ्य सामग्री के चयन में सतर्कता बरती जानी चाहिए।

विरह और प्रकृति के लोकगीतों से राजस्थानी साहित्य ओतप्रोत है। ग्रीष्म की लूओं से तप्त धरती पर जब वर्षा की पहली झड़ी लगती है तो राजस्थान का लोक मानस मोर की तरह कूक उठता है। वर्षा ऋतु का एक एक दिन राजस्थान की धरती के लिए वरदान बन कर आता है। खेत-खलिहान, गाँव-गली सब कुछ रसमग्न दीखता है। चारों ओर छाई हरियाली हृदय में गहरी उतर जाती है और भावनाओं के शतशत स्रोत मुखरित हो उठते हैं। कर्म और आनन्द दोनों का समान आह्वान लेकर आई हुई यह ऋतु राजस्थानी जनजीवन को प्राण कही जा सकती है। बलिष्ठ हाथों में हल की नोक पकड़ कर धरती का दर्द मिटाते हुए कृषकों का श्रम जब पुरवाई के झोंकों में कुसूमल ओढ़नियाँ लहराती हुई ग्राम वधुओं के तीखे स्वरों से गाये जाने वाले मीठे गीतों में विलीन हो जाता है तो कर्त्तव्य और आनन्द का अद्भुत सम्मिश्रण उपस्थित होता है। इसी स्वर्गीय आनंद की स्मृति परदेशी पतियों को उद्वेलित कर देती है और वे घर आने को आकुल हो उठते हैं। इधर विरहिणियाँ भी उमड़ती हुई काली घटाओं और उनका हृदय चीरकर चमक उठने वाली बिजलियों से डर कर पपीहे की तरह प्रिय की रट लगाने लगती हैं। इसीलिए राजस्थानी साहित्य में विरह और प्रकृति सम्बन्धी सामग्री सर्वाधिक मात्रा में है। स्त्रियों में संयोगी

दम्पत्ति को देख कर विरह की भावना तीव्रतर हो उठती है । इसीलिए वर्षा में चिरकाल से विरहिणी प्रकृति को संयोग में आनन्दित देखकर शायद स्त्रियों का विरह उभर उठता है । पर इसी विरह ने राजस्थानी साहित्य को सदा सदा के लिए अमर बना दिया है ।

श्री देवडा ने गीतों के अपने विवेचन में इसी अमरता का गायन किया है । गीतों की पृष्ठभूमि की चर्चा और उसके भावार्थ दे देने से इधर प्रान्तीय पाठकों के लिए पुस्तक की उपयोगिता बढ़ गई है । लोकगीतों के अतिरिक्त विषय से सम्बन्धित अन्य सामग्री भी प्रसंगवश दे दी गई है जिससे लोकगीतों की रसधार का साहित्य के अन्य प्रकारों में भी प्रवाहित होना लक्षित होता है । इस प्रकार देवडाजी ने लोक साहित्य के प्रकाशनों की परम्परा में अपना सहयोग देकर जनरुचि जागृत करने का प्रयास किया है । इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप आज हम उस स्थिति में पहुंच गये हैं जब हमें यह सोचने को विवश होना पड़ रहा है कि राजस्थानी साहित्य को एक ओर जहाँ सुरुचिपूर्ण तथा प्राचीन लोकगीतों के एक बृहत् संग्रह की आवश्यकता है तो दूसरी ओर उनके संगीत एवं काव्य पक्ष की निष्पक्ष और गूढ़ विवेचन की भी आवश्यकता है । गीतों का चुनाव, प्रामाणिक एवं सपूर्णपाठ, स्वरलिपियाँ, सांगीतिक विशेषतायें, काव्य सम्बन्धीगुण तथा लोकपक्ष आदि सभी विषयों का सम्यक् विवेचन करने वाले आलोचनात्मक ग्रन्थों को अब इस शृंखला की अगली कड़ियाँ बनने दें तभी लोक साहित्य की सच्ची परख हो सकेगी ।

रावत सारस्वत, एम०ए० एल-एल० बी०
सम्पादक
"मरुवाणी" मासिक

व्रत पूर्णिमा—जयपुर

आपने—थोड़ी सी अरज है:-

धोरां री धरती रा घायलां खलकता लोयां रा वाला बहाय ने, आखी दुनिया में राजस्थान री माटी री ओपमा, हिमाला री अेवरेस्ट कहीजण हालीं चौटी सूं मोटी कर दी। जद जद इण धरती री आंन मांन और मरजाद रो सवाल सपूतां रै सामे आयो, मरण रो पोतीयो पेर, बैरियां रा माथा आमण रे देवरे चढ़ावण री हूंस वारा हिवड़ा में बलवंती हुई। देश रा इतिहास में वे शूरी पूरी मिसालां आपरी होड में दूजी नी राखे। घणा मानीता सपूतां रा नाम, गीतड़ां और भीतड़ां रे रूप में आज भी अमर है। राज करण री रीत रो रूप बदल गयो है। नवे रजवाड़ा पर राजा ही रह्या, पण जनबल रा इण जुग में भी वां राजनैतिक फूटरापा में फरक नी आयो। राजस्थान भारती रो भंडार असूलां पर माथा देवण हाला मरदां रा गीता सूं भरियोड़ो तो है हीज, पण इण धोरां री धरती रा तीन लोक सूं न्यारा रूखां और बाजरी रै पूंखां रा गीत भी अजीत है। राजस्थान री सूखी प्रकृति में भी हिवड़ा ने सौ सौ बांस उछालण हाली मद-चखी रसधारा है। इण री ठीक तो उण दिन पड़े, जद राजस्थान रो लोक साहित्य जे लोक गीत गावण हालों रें कंठों में विराजे है, रो अध्यन करै। वां सूं वांरो पडूतर पूछै। कैर बोर और बालियां रा गीत, जल बावलिया गावै, आपरै हियारी पीड़ ने जद विजोगणां वां नै जणावै, और मीतां रा

विरह प्रकृति भक्ति

माध्यम सूं रूस्योड़ा राम ने रीझावै, तो सांची अरज करणी पड़े, आंख्यों रै सामने एक अलौकिक तसवीर उतर जावै। विजोग और प्रकृति वर्णन रा कीं आछा गीतां रा अंश म्हैं इण पोथी में मेला करण री कोशीश करी है। पोथी रो नाम रै अनुसार तो भक्ति रा गीत भी मेला होवणा चाहिजता हा पण जिन्दगी री माथाफोड रै आगे भक्ति रो परिच्छेद पूरो नी कर सक्यो। इण रै वास्ते मानीता पाठकां सूं हाथ जोड़ ने माफी अरज करूं हूं। म्हैं इण पोथी नै लिखने कीं नवरी तेरह करी वै, इसी बात नी है। पण इण बात में रूचि राखण हालां री निगाह में म्हारो या प्रयास तीजै नंबर में भी रह्यो और वां ने जै अरज करणो चाहूं वो अक्सीर हुओ तो मने घणी हिम्मत बधेला। इण बात सूं म्हैं छिण भी अफूठ नी फेरूंला के इण में घणी खरी कमियां है। इण विषय पर घणो खरो लिखीज सकतों हो। म्हूं इणरा दूजा भाग में कोशीश करूंला के पाठकां ने पूरो मेटर मिल जावे। इत्यार तो एक बार ओर माफी री अरज है। इण पोथी ने एकली देख भाई रात्नजीम रावत ने, जै राजस्थान भारती रा मानीता पूत है, आपरा दो आखर साथै कर दिया, इणरे वास्ते म्हूं वा ने घणा रंग देऊं हुं, सौभाग्यसिंह जी सेखावत रो घणो अहसान, ज्या इण पोथी नै आख्यौ रै आगे काट छपाई। रंग तो है विद्यापीठ रा साहित्य संस्थान ने जै राजस्थान भारतोय री सेवा करण रौ म्हने अवसर दियो।

घणा हेत सूं,

आकाशवाणी, राजस्थली विभाग, जयपुर;

आपरो हीज भाई

हणूंत सींघ देवड़ा

समर्पण

भायां अचल जी।

तोई म्हे तिरसा रह्या

या अचरज री बात।

बरसै बारौ मास ही

हिवड़ा में बरसात।।

आ पौथी–आपनै घणा हेत सूं......

आकाशवाणी जयपुर,

आपको हीज

हणूंत सींघ

विरह, प्रकृति और भक्ति

जन जीवन की जिह्वा पर युग युग से आसीन स्वरों का दूसरा नाम लोक साहित्य है। जनता के दैनिक जीवन का सही चित्रण किसी भी देश के लोक साहित्य में होता है। गीतकार अपने हृदयस्थ भावनाओं को उद्वेलित करता है। उसमें मानवीय जीवन का यथार्थ उतरता है और वही जन साधारण के स्वरों में व्याप्त होकर जन जीवन का गीत बन जाता है, और ऐसे ही गीत लोकगीत बन जाते हैं। उनमें लोक जीवन के रुदन, मिलन, विरह, आदि मनोवेगों का प्रतिबिम्ब झांकता है। जनता उन्हें परंपरागत गीत बना कर अमरता प्रदान करती है और यही लोक साहित्य की विशेषता है। गीतों की वे स्वर लिपियां जन गायक जातियों के कण्ठों में परंपरा से बिराजमान रहती हैं। वे शाश्वत भावनायें कितनी ही पुरानी क्यों न हों पर उनमें एक नैतिक आकर्षण है। राजस्थान की धरती पर बसने वाले लोक जीवन का लोक साहित्य अपने में अनुपमता लिए हुए है। इस महाप्रदेश के करोड़ों राजस्थानियों द्वारा बोली, लिखी और पढ़ी जाने वाली भाषा राजस्थानी का लोक साहित्य अपना सानी नहीं रखता। राजस्थानी जीवन की परंपरायें बहुत पुरानी हैं, राजस्थान के उत्तर पश्चिम, दक्षिणी पंजाब तथा निचले सिंध

कांठे में हड़प्पा और मोहन जोदड़ो आदि की खुदाई में ५–६ हजार वर्ष पूर्व के एक अत्यंत समृद्ध सभ्यता के अवशेष मिले हैं। विद्वानों ने उसे आर्य या वैदिक सभ्यता करार दिया। राजस्थान में प्राचीन मत्स्य की पुरानी राजधानी बैराठ की खुदाई में प्रागैतिहासिक नव्याशम युग के हथियार मिले हैं। *

तात्पर्य यह है कि हजारों वर्षों से समय और स्थिति के साथ बना हुआ लोक साहित्य अपने में विभिन्न युगों के जन जीवन का नामा लेखा लिए हुए है। मारवाड़ी, ढूंढाड़ी, मेवाती, बागड़ी और हाड़ौती राजस्थानी की जनपदीय बोलियां हैं और इन्हीं में या इनकी उपबोलियों में राजस्थान का लोक साहित्य निर्मित हुआ है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि राजस्थान का अतीत असीम गौरव पूर्ण रहा है। राजस्थान के यौधेय देश के पूर्व मत्स्य देश की राजधानी विराटनगर से प्राप्त प्राचीन अवशेष इस बात के प्रतीक हैं कि, राजस्थान का भूभाग भारत के अन्यतम भूभागों में था। सम्राट अशोक के समय का अशोक स्तम्भ शेखावटी में प्राप्त हुआ है जो इस बात का जीवित प्रमाण है कि राजस्थान, सम्राट अशोक के राज्य का भी एक भाग रहा है।

राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार श्री पृथ्वीसिंह मेहता ने लिखा है कि 'राजस्थान में अवन्ति और मालव, दक्षिणी जयपुर, कोटा, बूंदी, मेवाड़ आदि राज्यों के प्रदेश पर गुप्त साम्राज्य का अधिकार भी रहा'' गुप्तकाल

---

* हमारा राजस्थान लेखक पृथ्वीसिंह मेहता,

भारतीय इतिहास का स्वर्णकाल कहा जाता है। भारत के उस स्वर्णयुगीन साम्राज्य के भूभाग का लोक साहित्य वस्तुतः उतना ही स्वर्णिम है। राजस्थान की धरती को संस्कृत के महाकवि माघ और सुप्रसिद्ध ज्योतिर्षी ब्रह्मगुप्त को उत्पन्न करने का गौरव प्राप्त है।

विक्रमी सवत् ११९८ से राजस्थानी जीवन पर मुस्लिम सभ्यता का प्रभाव भी पडा तभी से मुस्लिम आक्रमणों का सामना भी राजस्थानी जनता को करना पड़ा, १२३४ में मेवाड के राजा जैत्रसिंह ने दिल्ली के सुलतान इल्तुमिश को करारी हार दी और तभी से मेवाड़ के गौरव पूर्ण इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ प्रारम्भ हुआ। १२६१ में अलाउद्दीन खिलजी ने राजस्थान पर आक्रमण किया और तब से मुगल राज्य के पतन तक राजस्थानी जन जीवन ने मुसलमानों से लोहा लिया। उसने अपने शोणित से इतिहास के पृष्ठ रङ्गे। राजस्थान के लोक सङ्गीत एवं लोक साहित्य में राजस्थान की जनता द्वारा स्वाधीनता के लिए निरंतर किए गए प्रयासों का प्रवाह है। यहां की वीर ललनाओं ने भी अमर जौहर व्रत धारण कर नारी जगत का नाम ऊँचा किया, वे प्रेरणास्पद कहानियाँ युगों से राजस्थानी जनता द्वारा गाई जाती हैं। अरिशोणित के प्यासे मतवाले अमर शहीदों ने जिन्दगी और मौत को दोनों मुट्ठियों में दबा कर जो शौर्य पूर्ण राजस्थानी परम्परा कायम की वह वहां के लोक सङ्गीत की स्वर लहरी में फूट पड़ी है। राजस्थान के लोक साहित्य मे अनूठी अभिव्यक्तियां हैं, जिसका प्रभाव पाठक के हृदय पर पडता है यहां का लोक सङ्गीत और साहित्य खूब मंजा हुआ है। सत्यं शिवं और सुन्दरम् की त्रिवेणी हमें राजस्थान के लोक साहित्य में छलकती दृष्टिगत होती है। राजस्थान

की सामाजिक बदलती करवटों का रूप, प्राण प्रण से चिर अमर गौरव पूर्ण मर्यादाओं के संरक्षण के लिए किए गए जन बलिदान, वे अनुकरणीय आख्यान यहां के लोक साहित्य में जिस ढंग से वर्णित हुए हैं उसे देखते ही बनता है।

राजस्थान के जन साहित्य में राजस्थानी प्रेमाख्यानों की भी कमी नहीं, रामू चनणा, सुलतान निहालदे, सोरठ बीजा, जसमल ओडणी, राणो काछबो, नागजी आदि प्रेमभरी लोक गीत गाथायें जब हम सुनते हैं तो हृदय प्रेम विभोर हो उठता है। ढोला मरवण की प्रेम गाथा गीत में वा सङ्गीत में रङ्गमञ्च पर वा चित्रपट पर कहीं भी पढ़ी सुनी वा देखी जाय तो दृष्टा व श्रोता का हृदय उसमें रम जाता है। राजस्थानी लोक साहित्य जहां गौरव पूर्ण वीरगाथाओं का घर है वहाँ वह प्रेम गाथाओं का अखूट भण्डार भी है।

सोने को ज्यादा तपाने पर ही तो उसकी असलियत का पता चलता है। राजस्थान की रेतीली धरती के तपे रजकणों में उन सभी प्रेमियों के प्रेम गीत रम गए हैं। उमसे राजस्थान की शुष्क प्रकृति में एक अद्वितीय आकर्षण आ गया है। जिसे प्रेमी ही देख सकते हैं। विरह और संयोग प्रेम की वे संज्ञायें हैं। प्रेमी अपने पात्र की परछाँई प्रकृति के उपकरणों में भी अनुभव करता है। रूप यौवन शृंगार और प्रेम मनुष्य जीवन के स्थायी आकर्षण हैं। वह आकर्षण हर एक जीवन में एक न एक बार उथल पुथल मचाता ही है। राजस्थान ने अपने धानी आंचल में जहाँ एक ओर मातृ भूमि के लिए अपना सब कुछ न्योछावर करने वाले वीर और वीरांगनायें पैदा की वहां राजस्थान को प्रेमी हृदयों को पैदा करने का सौभाग्य प्राप्त है। उनकी

वे प्रेम गाथायें अति सरस हैं। राजस्थान की कई एक प्रेम गीत गाथाओं में से मुझे रामू चनणा की स्मृति हो आई है। रामू और चनणा प्रेम का एक युगल रूप था। प्रेम शाश्वत होता है। वह समार के सारे बंधनों की दीवारें फोड कर वेगवती सरिता की तरह मार्ग में आने वालों को भी अपने साथ बहा ले जाता है। रामू और चनणा दो विभिन्न जातियों के सदस्य होते हुए भी प्रेम पाश में बंध गए। बचपन में साथ साथ बाल क्रीडायें कीं। उन मधुरिम स्मृतियों ने किशोर यौवन में प्रेम का रूप धारण कर लिया। चनणा रूठा करती एवं रामू मनाता। रूठने और मनाने के इस उपक्रम में कितना आनन्द एवं सुखमयी वेदना होती है यह तो भुक्त भोगी ही जानता है। रामू और चनणा का वह संपर्क गाढे प्रेम में परिवर्तित हो गया। झूले पर ताल वा तलैया पर घर वा बाहर जहां कहीं अवसर मिला रामू चनणा का मिलन हो ही जाता। स्त्री की आँखें स्त्री के मनोभावों को पहचानने में निष्फल नहीं होतीं। चनणा की मां ने रामू के प्रति चनणा के आकर्षण को पहचान लिया। उसने उसके पति राजा रसालू को बुलवा भेजा। वह आया भी। चनणा को लिवाने। वियोग की वेदना की बरसात चनणा की आंखों में आ गई। सुसराल जाने के पहले वह अपने प्रेमी रामू से मिलना चाहती थी रिमझिम करती वर्षा की बून्दों में जब कि सघन अंधेरी रात थी, चनणा रामू के द्वार पर पहुँची। प्रेम अंधा होता है। चनणा निडर हो रामू से मिलने चली आई। वियोग के क्षणों में दो प्रेमियों के हृदयों पर कैसी बीती यह इन पंक्तियों से पूछिये :—

टग टग म्हेलां जीक चनणा ऊतरी जी कोई
गई गई रामूडे री हाट ढाक्यो तो फलसो
खोल दे हो जी।

भिर मिर भिर मिर एक चमणा मेह पडेजी कोई
बरसै मूसलधार थारो तो आवण एक
चनणा क्यों हुयोजी।

म्हारे तो घर में आया पावणाँ जी कोई
ले जासी मने साथ. अबका बिछड्या
रामू प्यारा कद मिलो होजी।

ढकियो तो फलसो खोल देक रामूडा
कोई खोलो सजड किवाड,
आगल खोलो जीक बीजल सारखी ओ जी।

कोयां में काजल रेक घुल रही जी कोई
बिंदली भोला खाय,
कागद फीका रेक रामू प्यारा करम जी।

हाथां में मेंहदी रेक रामू प्यारा हमर सी जी कोई
लाल चूडो चितरायनेह सतावै रेकफलसो खोलदे

कितनी प्रेम भरी उदात्त भावनायें हैं। बिछोह की घडियों के पहले यौवन रस के लबालब भरे प्याले को पीने का सही हक चनणा के हृदय सम्राट रामू

को है। रामू को चनणा हृदय से वरण कर चुकी थी। आज राजस्थान में यह आख्यान अति लोक प्रिय है।

राजस्थानी महिला जगत की बाल सम सरलता सुन्दरता के असीम आकर्षण, आत्म समपर्ण और विरह वेदना साफ एवं पावन सूत्रों से इस प्रकार की कई एक प्रेम भरी लोकगीत गाथाओ के पट पर रङ्गीन रचनायें हुई हैं। ऊजली और जेठवा का विरह वर्णन अति मर्मिक है। विर वियोग की वह आग ऊजली के हृदय में जलती रही जेठवा को वह मिल कर भी नहीं मिल सकी। जेठवा के विरह गीत गाकर एवं वेदना के आंसू पीकर उसने जीवन बिताया। जेठवा और ऊजली के सोरठे राजस्थान की जन जिह्वा पर आज भी उसी प्रेम और श्रद्धा से आसीन हैं। ऊजली के हृदय के मनोभाव इन सोरठों से पूछिये :—

जग में जोडी दाय, चकवै ने सारस तणी।
तीजी मिली न कोय, जो जो हारी जेठवा ॥ १ ॥

तावड़ तड़तड़तांह, थल ऊंचो चढतां थकां।
लाधो लड़ थड़तांह, जाडी छाया जेठवा ॥ २ ॥

दीसे घणां सवार, घुड़लां री घूमर कियां।
मो अबला आधार, जिका न दीसे जेठवा ॥ ३ ॥

जिण बिन घड़िय न जाय, जमवारो किम जावसी।
म्हू बिलखंती थाय, जोगण करग्यो जेठवा ॥ ४ ॥

पाबासर पैठेह, हंसो एक न हेरोयोह ।
बुगलां संग बैठेह, जूण गमाई जेठवा ॥ ५ ॥

ऊजली ने अपने वृद्ध पिता की आज्ञा मान कर जेठवा के कुंठित शरीर की स्नायुओं को अपने शरीर की गर्मी से उष्णता प्रदान करने के पहले उसे पति के रूप में वरण किया था। जेठवा जी उठा। ऊजली के स्पर्श ने जीवन दान दिया पर संसार में सबसे प्रिय वस्तु ही तो दुख का कारण होती है। जेठवा ऊजली से बिदा होकर पुनः न लौटा। ऊजली मिलने गई भी पर उसने उसकी त्याग मयी प्रीत को विस्मृति के सागर में बहा दिया। और तब से वह विरहणी ही रही। सोरठों के बड़े मार्मिक अर्थ हैं। और अंतिम सोरठे में तो विरह का सागर उमड़ पड़ा है। जिसके बिना जीवन का स्वांस भी नहीं चलता उसके बिना यह जीवन दूभर है। मैं तो विरह में योगिन होकर हे जेठवा तेरे वियोग में विलख रही हूं।

जल पीधो जाडेह, पाबासर रे पावटे,
नानकिये नाडेह, जीव न धापे जेठवा ।

जेठवा के मानसरोवर रूप हृदय से उद्वेलित प्रेम रस का पान करने के बाद ऊजली जैसी सच्ची प्रेमिका का मन भला और जगह कैसे लगता? इस प्रकार के अनेक स्थल राजस्थानी लोक साहित्य में आपको मिलेंगे।

सावन की झड़ी में किसी बादलों से घिरी धुन्धली सांझ में खेतों से घर आती रमणियों या चैत्र बैसाख की चांदनी में गाती हुई किशोरियों के कण्ठों से उच्चरित स्वरों में लाखां और राणा काछबा का प्रेम गीत जब

श्रोता सुनते हैं तब प्रेम की बोलती तसवीर आंखों के सामने आ जाती है। लाछां की प्रणय कथा में भी जो हृदय की टीस छिपी हुई है वह असर करती है। यौवन एवं लावण्य की तरङ्गों में झूलती हुई भोली लाछां ने अपनी भाभी से जब अपने पति का गलत परिचय प्राप्त किया तो दंग रह गई उसने अपना सम्बन्ध विच्छेद करने के लिए राणा को दूत भेज दिया पर जब प्रत्यक्ष दर्शन मिले तो वह आत्म ग्लानि से सिहर उठी और फिर अंत तक राणा के विरह में जल कर भस्म हो गई

जाए छोरी जाशीडा ने ल्याये ए बुलाय
किता ए दिनां से आवे राणो काछबो
खोलो ना जोशीजी थांरो टीपणो
किता तो दिनां सूं आवे राणो काछबो

पर राणाजी नहीं आए। विरह व्यथित लाछां अपना कुंवारापन भी नहीं उतार सकी पर वह प्रेमी रमणी धुँधवाती चिता में राणा का नाम रटती मर गई। कितनी दर्द भरी गीत गाथा है। राजस्थानी लोक साहित्य इस प्रकार की कथाओं का सागर है ढोला और मरूवण की प्रेम कथा भी अति हृदयग्राही है।

ढोला मारवणी राजस्थान का एक जन प्रिय लोक काव्य है। यह एक दोहा बद्ध प्रेम आख्यान है यह न केवल राजस्थान वरन् मध्यप्रदेश में विलीन मध्य भारत की जनता में परम्परा से लोक प्रियता प्राप्त किए हुए हैं। ढोला मारवणी का कथा सूत्र मूल रूप में ठीक ढंग से प्राप्य नहीं है। प्रारम्भ में

चूँकि यह लोक काव्य दोहों में लिखा गया था। परन्तु बाद में उसका रूपान्तर होने लगा। मूल दोहे कम ही प्राप्य हैं पर जो कुछ भी हमारे सामने हैं और राजस्थान की जनता जिस रूप में उसे ग्रहण किए हुए है वह अति रसपूर्ण है। ढोला मारवणी की प्रेम गाथा शृङ्गार युक्त होते हुए भी मर्यादा की सीमाओं से बाहर नहीं गई है। इसके हेतु यह दोहा प्रसिद्ध है।

सारठियो दूहो भलो, भलि मरवण री बात॥
जोबन छाई धण, भली तारां छाई रात।

दोहों में सोरठा भला वार्ताओं में ढोला और मरवण की प्रेम गाथा, यौवन रस से परिपक्व नारी एवं तारों से अच्छादित रात भली सुहावनी लगती है। इस प्रेम गाथा में प्रेम विरह और संयोग वर्णन के अलावा जो मुझे विशेष अच्छा बात यह लगी कि उसमें राजस्थान का प्राकृतिक सौन्दर्य निखर उठा है। राजस्थान की गर्मी, सर्दी और वर्षा अपने में मौलिकता रखती हैं। राजस्थान की गर्मी का स्वाद तो जैसलमेर के रेतीले टीलों से घिरे झोंपड़ों में बसने वाले राजस्थानी हृदय ही बता सकते हैं गर्मी में चलने वाली वे लूयें, और तपतपाती आग उगलती राजस्थान की रेतीली धरती अपना उग्र शृङ्गार लिए हुए उपस्थित रहती है। ढोला मरवणी के प्रेमाख्यान में राजस्थान का प्रकृति वर्णन साकार हो उठा है।

"थल तत्ता लू सांमुही, दाझोला पहियाँह।"

इस पंक्ति में राजस्थान की तपतपाती गर्मी का भीषणतम चित्र नेत्रो में उपस्थित होता है ढोला मारवणी में राजस्थान की वर्षा का वर्णन भी अति

सुन्दर बन पड़ा है। तपतपाती लुओं की गर्मी में भुने शरीर पर सावन की छींटे कितनी सुखकर होती हैं। यह ये पंक्तियां बतायेंगी।

उनमियऊ उत्तर दिसइ, काली काँठल मेह।
म्हूं भीजूं घर आगणइं,पिऊ भीजँई परदेश॥

कितना स्वाभाविक एवं सुन्दर चित्रण है इस लोक काव्य में कजरारे बादलों की घटाओं से आकाश घिर गया है। वर्षा हो रही है। मैं घर के आंगन में भीग रही हूँ और मेरा प्रियतम परदेश में भीग रहा है। प्रकृति एवं विरह दूध एवं पानी की तरह मिल गए हैं।

बिजुलियां चहलावलि, आभई आभई च्यारि।
कद रै मिलूंला साजना, लांबी बांह पसारि॥

बादलों ने बिजली को भुज बाहों में बांध लिया है। अति उमङ्गमय प्रणय क्रीडा हो रही है पर मेरे हृदय श्याम! तुम्हें मैं बांह पसार कर कब मिल सकूंगी।

सावन आया। रिम झिम कर वर्षा हुई। ताल तलैया भर गए। सरितायें अपने प्रेमी सागर को संदेश सुनाने चल पड़ी। झरनों की कलकल ध्वनि विरहणी के हृदय में मीठी मीठी पर वेदना मय कसक भरने लगी उसने अपनी सखी से अति करुण पर प्रेम भरे शब्दों में कहा—

जल थल थल जल हुइ रहेऊ, बोलइ मोर किंगार।
सावण दूभर हे सखी, किहां मुझ प्राण आधार॥

प्रिय के बिना प्रकृति का उन्माद भरा शृङ्गार भला किस पाषाण हृदया प्रेमिका को भाता है। संयोग की घड़ियों से वही प्रकृति का बनाव नायक और नायिका के लिए अति सुख कर हो जाता है राजस्थान का जन जीवन जहाँ एक ओर शोणित की धाराओं को देख कर विचलित नहीं हुआ वहां वह प्रेम अनुभूति पाकर मोम की तरह पिघल भी जाता है। राजस्थान के लोक गीत और लोक काव्य ऐसे स्थलो से भरे पडे हैं।

बाजरियां हरियालियां, बिच बिच बेलां फूल।
जव भरि बूठऊ भाद्रवऊ, मारू देश अमूल॥

यह है राजस्थान की तस्वीर जो मारूवणी के शब्दों में उतर आई है। इसमें राजस्थान का प्राकृतिक सौन्दय बिहँस रहा है। बाजरे की फसल हरी होकर लहलहा रही है, उनके मध्य फूल लग गए हैं। भादों की बरसात हो रही है। ऐसे समय में मरूस्थल का सौन्दर्य निखर गया होगा। वर्षा वस्तुतः राजस्थान में वरदान है रतीली भूमि में मेघ बाबा का स्वागत अति उमङ्ग से होता है। आनन्दोत्सव मनाते हैं। खुशियां होती हैं हर्ष का सागर लहराता है। ग्राम गोकुल बन जाते हैं तभी तो कहा...

धर लीली धण पुण्डरी, धरि गह गहई गमार।
मारू देश सुहामणऊ, सांवणि सांझी बार॥

ऊँचई मंदिर अति घणउ, आवि सुहावा कंत।
वीजलि लियइ झबूकडा, सिहरां गलि लागंत॥

सावण आयो साहिबा, पगां बिलूँबी गार।
अच्छ विलंबी बेलडी, नरां बलूँबी नार॥

वस्तुतः ढाला मारवणी के इन दोहों में विरह और प्रकृति का सांगापांग वर्णन हुआ है। वर्षा में राजस्थानी जन जीवन सर्वोत्तम आनन्द का उपभोग करता है।

राजस्थान में शीतकाल भी तो अपने ढंग का अनूठा है। रेत के धोरे जो गर्मी में आग उगलते हैं वे सर्दी में कुंठित हो जाते हैं रेत हिम भी बन जाती है। कोई भी ऋतु संयोग में सुख कर एवं वियोग में दुःख कर होती है। यह एक मानव जीवन का एक स्वाभाविक दृष्टिकोण है। कड़कड़ाती सर्दी में प्रेमिका अपने प्रेमी के विरह में कट रही है। उत्तर दिशा से आने वाले प्रभजन के ठंडे झोंके राजस्थान की धरती पर उगी हुई वनस्पति को भस्म कर देते हैं। पाला पडने लगता है लोग सर्दी का बचाव आग से तप कर करते हैं। और प्रेमिका मदिरा पीकर करती है कवि की अपनी कल्पना है कि सूर्य राजस्थान की सर्दी से डर कर दक्षिण की ओर भाग जाता है। इस प्रकार के भाव इन दोहों में वर्णित हुए हैं

उतर आज न जाइयो, जहांस सीत अघाघ।
ता भई सूरिज डरपतऊ, ताकि चलि दखणाध॥

मरुस्थल का प्रकृतिवर्णन और देखिए।
"देस सुहावण सजल. सजल मीठो बोले लोग"

अर्थात् मरुस्थल सुहावना है जहां के लोग मृदु भाषी हैं।

बञ्जर मरु प्रदेश म वृक्षों का अभाव स्वाभाविक है। विश्राम करने की जगह पर रेगिस्तान के जहाज ऊंट को किसी वृक्ष के ही बांधना पडता है।

पर वृक्षों की कमी के कारण ऊंट के पैर को मोड कर बांध दिया जाता है। राजस्थान का जन कवि देसूजी चारण इसे भी नहीं भूला है।

ऊंभर सालह उतारियऊ, मन खोटइ मनुहारि।
पगसूं ही पग कूंटियऊ, मुहरी झाली नारि॥

आके फोगे छांहडी, हंछां भांजइ भूख।
जिण भुँइ पन्नग पीयणा, कयर कंटाला रूंख॥

यह है राजस्थान के लोक साहित्य में राजस्थान का प्राकृतिक चित्रण। लोक गीत व लोक साहित्य में जन साधारण के स्वर होते हैं। उसमें जनसाधारण की स्वीकृति होती है। उनमें संगीत और काव्य का मिलन होता है। राजस्थान के प्रेमाख्यानों में हमें प्रकृति वर्णन, विरह और अन्य भावों का सजीव संसार मिलता है राजस्थान की सभी प्रेम कथायें मनोरञ्जक हैं। उनके घटनाचक्र हृदयग्राही हैं। लोक संगीत में मानव जीवन की कोमलतम भावनाओं का चित्रण है। लोक जीवन का प्रकृति के प्रति व्यक्तिगत ही नहीं वरन् सामाजिक सम्बन्ध रहता है। लोक गीतकारों के लिए प्रकृति उनकी सामूहिक अनुभूतियों को उकसाती है। प्रकृति श्रमिकों को श्रम और साधना की प्रेरणा देती है।

'इन्दर जी ने मोकलजे म्हाँरी बीजू राणी ए"

आकाश में चमकती हुई बिजली को देख कर वर्षा के लिए राजस्थानी लोक जीवन तडफ उठता है। वर्षा आती है लोग श्रम और साधना में उत्साह का परिचय देते हैं। राजा इन्द्र की मनौती करते हैं। राजा इन्द्र की प्रेयसी बिज्जू (बिजली) से अनन्य आग्रह करते हैं। लोक जीवन प्रकृति को मानवीय

चेतना के रूप में अंगीकार करता है। बादलों में मात्र पानी नहीं पर वे वर्षात् की बूंदे मोतियों से कम मूल्यवान नहीं बादल पानी नहीं वरन् जन साधारण के जीवन की खुश हाली बरसाते हैं। उनका आनन्द वर्षा करता है उन बादलों से। बालक खुशी से फूले नहीं समाते। उनके हेतु मानों माखन मिश्री बरस रही है।

ऐसे ही दो गीत प्रस्तुत है पुरवा बहन और सूर्या भाई आपस में एक दूसरे को संबोधन कर गाते हैं।

छिन एक चालो परवा भांण
मेहां री म्हाँरे लग रही चाव
छिन एक चालो परवा भांण
दाय घडी जे रलको दे दे तो
ताली भर जाय आंगण मांय
छिन एक चालो परवा भांण
दोय घडी जे रलको दे दे तो
बंधिया पीवे ठाँण
छिन एक चालो परवा भांण
दोय घडी जे रलका दे दे तो
छिल छिल भर जाय सरवर ताल
छिन एक चालो परवा भाण
दोय घडी जे इकलंग चालै तो

बोदा दुनियां फिर जी जाय
छिन एक चालो परवा भांग ।

"बोदी दुनियां फिर जी जाय" इस पंक्ति में लोक जीवन का प्रकृति के प्रति अटूट सम्बन्ध दृष्टिगत होता है। वर्षा की बूंदों में उन घनघोर घटाओं में लोक जीवन की जिन्दगी वर्षती है

सूरया बीर बदली ल्याइ रै
झाला दे दे तोय बुलाऊं
थूं म्हाँरे देसां आई रै
सूरया बीर बदली ल्याइ रै
जेठ न आवै माढ न आवै
सावण अलबत आई रै
सूरया०
पग पांनी पालर कर दे
तो सिर बादलियां छाई रै,
सूरया०
पिणियारयां खुशियाली कर दे
घर में ताल भराई रै,
सूरया०
पणियारयां तोय घरां उडीकै
हाली खेता माँइ रै,
सूरया०

बूढा ठेरा पून पिछाणै
थूं दाय भालां दे ज्याई रे
सूरया बीर बदली आई रै।

प्रकृति और लोक जीवन का कितना सामंजस्य है? प्रकृति और लोक साहित्य को किसी भी स्थिति में अलग नहीं किया जा सकता। वर्षा के आवागमन पर हर्ष से बदली का कितना सुन्दर वर्णन हुआ हैं

आयो आयो सावण भादवो
काई काली घटा घिर आय।
आज म्हाँरी बादला बरसेगी।
म्हाँरो बारोजी बीजे बाजरो,
म्हाँरा भाभीजी काटे फोग।
आज म्हाँरा बादली बरसेगी।
म्हाँरा काकोजी चरावे टोरड़िया
म्हाँरा भाऊजी लावे छकियार।
आज म्हाँरी बादली बरसेगी।
म्हाँरे रैतां नै चारो मोठरो,
म्हाँरे हालीडां ने गुदली खीर,
आज बदली म्हाँरी बरसेगी।

प्रकृति से जन जीवन ने शिक्षा प्राप्त की है। प्रकृति का पूर्ण शृँगार मानव जाति के हेतु सीखने की सामग्री रहा है। सूरज, चांद, नक्षत्र, वायु

बिजली, बरसात, नदी, पहाड झरने, सागर ताल-तलैया, बन, आँधी, तूफान, सर्दी, गर्मी, पतझड आदि से जन जीवन को आत्मिक सहारा मिला है। प्रकृति के ये सारे उपकरण उसकी आत्म चेतना के माध्यम हैं। प्रकृति मनुष्य की जरूरतों को पूरीं करती हैं। उसकी हृदयस्थ भावनाओं का आदर करती हैं। मनुष्य के गम में वह रोती है और हर्ष में वह उछल कूद करती है। नैराश्य के घोर अंधकार में वह आशा का दीप जलाती है। वह उसे आशा का वरदान देती है। प्रकृति की प्रभुता को मनुष्य सिर झुकाकर स्वीकार करता है! प्रकृति मानव जीवन की सबसे रुचिकर एवं आवश्यक आवश्यकता है। गर्मी की तपतपातीलुओं की लपटें मरुस्थल राजस्थानी जन जीवन को तपाने के बाद भी एक अद्वितीय संतोष की भावना जागृत करती है। शरीर से टपकते हुए पसीने को पौंछता हुआ राजस्थानी लोक जीवन कह उठता है।

दुसमणारी किरपा बुरी, भला सैणारी त्रास।
जद सूरज गर्मी करै, तद बरसण री आस॥

पतझड़ ऋतु में झड़ती हुई पत्तियों को देख कर नव पल्लव उसके प्रति उपेक्षा करते हैं। संसार असार है और एक दिन सभी जिन्दगियों का अंत अनिवार्य है। प्रकृति के इस यथार्थ सत्य को मानव ने नवपल्लव और झड कर गिरने वाली पत्तियों को देख कर करवाया है।

पान झडंता देखकर हंसीज कूपलियांह।
मो बीती तो बीतसी, धीरी बापडियांह॥

सूर्य और चांद को राजस्थान का जन जीवन श्रद्धायुक्त हृदय से श्रद्धा एवं भक्ति के फूल चढ़ाता है। इनके प्रकाश में किसान का जीवन पलता

है। उसकी खेती लहलहाती है। उसके पशु स्वस्थ रहते हैं। सूर्य, वायु, बादल और वर्षा लाता है। सूर्य और चन्द्र जन जीवन के हेतु दैविक शक्तियां हैं। सूर्य की तसवीर राजस्थान के इस लोक गीत में अति सुन्दर ढंग से चित्रित हुई है।

धोला धोला कांई करो अे, धोला वन में कपास
धोलो सूरज जी रो घोड़लो अे, धोला बहू रैणादे रा दांत
उगतो उजास वरणो, आथमतो सिंदूर वरणो
गऊ अे चरण चाली, पंछीला मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां, बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्यां, सुसरेजी घर आणंद उछाव
राता रातो कांई करोअे, राती चुडले रो मजीठ
रातो सूरज जी रो घोड़लो अे, राता बहू रैणा दे रा नैण
उगतो उजास वरणो, आथमतो सिंदूर वरणो
गऊ अे चरण चालो पछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेलां बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्यां, सुसरेजी घर आणद उछाव
कालो कालो कांई करो अे, काला वन रा तो काग
कालो सूरज जी रो घाडलो अे, काला बहू रैणा दे रा केस
उगतो उजास वरणो, आथमतो सिंदूर वरणो

गऊ अे चरण चाली पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां, बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्या, सुसरेजी घर आणंद उछाव
पीली पाला कांई करो अे, पीली आ चिणा की रा दाल
पीलो सूरजजी रा घोड़लो अे, पीलो बहू रैणादे रा चीर
उगतो उजास वरणो, आथमतो सिंदूर वरणो
गऊ अे चरण चाली, पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां बाबल घर बाज्या ढाल
सहेल्यां सुसरेजी घर आणंद उछाव
हरियो हरयो काई करा अे, हरी अे वन में ता दूब
हरियो सूरजजी रा घोड़लो, हरी बहू रेणादे री कूख
उगतो उजास वरणो, आथमतो सिंदूर वरणो
गऊ अे चरण चाली, पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां, बाबल घर बाज्या ढोल

जन जीवन में सूर्य चन्द्र और तारों को विरह व्यथा से कसमसाती घड़ियों में जिन निगाहों से निहारा है। जिस ढंग से उन्होंने उपालंभ दिया है। वह कितना हृदयग्राही है। इन पंक्तियों में पढ़िये—

चंदा छिपज्या रै बदली मांही
क्यूं रे म्हाँरी देह जलावे,
पापी चंदा ओ तेज म्हाँसू सह्यो न जाई
चंदा छिप ज्या रै बदली मांही
मैं कांई थारो करियो रै बिगाड
थूं आप जलियो, नै मोय जलाई
चंदा छिप ज्या रै बदली मांह।
में झूर रही म्हाँरे पाव नै
नूं मोय आय सताई
चंदा छिप ज्या रै बदला मांही।
जे थूं म्हाँने ओजूं दावेगो
तो थनै राम दुहाई
चंदा छिपा ज्या रै बदली मांही।

वहीं चन्द्रमा जब बादलों में छिप जाता है तब...

बदली ऐ म्हाँरो चाँद छिपायो
उठउठ बदली म्हाँरे घर आई
महलां ऊपर घेरो ऐ लगायो
बदली ऐ, म्हाँरो चाँद छिपायो
कुण सी दिसा सूं आई ऐ बादली
कुण म्हाँरो घर ऐ बतायो
बदली ऐ, म्हाँरो चाँद छिपायो

दिखण दिसा सूं आ उठी रे बादली
औ तो ढूँढत ढूँढत घर पायो
बदली ओ, म्हाँरो चाँद छिपायो
क्यों बदली म्हाँरो चाँद छिपायो
क्यों घर म्हाँरे ओ घेरो लगायो
बदली ओ, म्हाँरो चाँद छिपायो
रतनागर सूं नीर जे भरियो
बरसण ने घेरो ओ लगायो
बदला ओ, म्हाँरो चाँद छिपायो
घहर घुमेर ऊमड़ी बादली
थारी चांद ओट में आयो
बदली ओ म्हाँरो चाँद छिपायो ।

लोक जीवन और प्रकृति का अटूट सम्बन्ध राजस्थान के इन गीतों में मुखर उठा है।

(गीत १)

वालो लागै छै म्हाँरो देसडो ओ लो
केम कर जाऊँ परदेस, वाला जो
ऊंचा ऊंचा राणेजी रा गोखडा ओ लो
नीचे म्हाँरे पीछोले री पाल, वाला जो
बादल छाया देस में, ओलो
नदियाँ नीर हिलोहिल रे

बादल चमके बीजली
चमक चमक झड़ लाय
सरवरपाणीड़े ने मैं गयो, अेलो
भीजे म्हाँ रे सालूडै री कोर, वाला जो
वालो लागै छै म्हांरो देसडो; अे लो
केम कर जाऊं परदेस, वाला जो।

(गीत २)

झिरमिर झिरमिर मेहूडौ बरसै, बादलियां घररावै अे
जेठजी तो म्हाँरा बूजा काटै
परण्यो हलियो बावै अे
झिर- मिर झिर-मिर मेहूडौ बरसै, बादलियो घररावै अे
देवर म्हाँरो करै अलसौटी
जेठाणीं रोटो ल्यावै अै
झिर-मिर झिर-मिर मेहूडौ बरसै बादलियो घररावै अे
बालकियौ भतीजो म्हाँरो रेवड़ चरावै
नणदल गायां घेरै अे
झिर-मिर झिर-मिर मेहूडौ बरसै बादलियो घररावै अे
ग्वालां ने म्हाँरे गलछट चूरमौ

हालियां ने खीर लापसी ओ
भिर मिर भिर-मिर मेहूडौ बरसै बादलियो घररावै ओ।

(गीत ३)

आयो आयो, सावण भादवो
कोई काली घटा घर आय
आज म्हाँरा बदली बरसैगा

म्हाँरो बीरोजी बीजै बाजरो
म्हाँरा भाभीजी काटै फोग
आज म्हाँरी बादली बरसैगी

म्हाँरा काको चरावे टोडिया
म्हाँरा माउजी लावै छांकियार
आज म्हाँरी बदली बरसैगी

म्हाँरै बैतां नै चारो मोठ रो
म्हाँरे हालिडां नै गुदली खीर
आज म्हाँरी बदली बरसैगो

राजस्थान के लोक साहित्य में जिस सुन्दरता से प्रकृति वर्णन हुआ है। यदि उसे पूर्ण रूप से चित्रित किया जाय तो कई हजार पृष्ठों का ग्रन्थ बन सकता है।

राजस्थान के गांवों में लोक गीत गायक जातियों की जिह्वा पर आसीन गीतों को लिपिबद्ध कर उसे सही रूप में सामने लाने की जरूरत है। किसी भी राष्ट्र, जाति व समाज की लोक संस्कृति में वहां का क्रमबद्ध इतिहास होता है। अस्तु।

राजस्थानी लोक साहित्य में प्रकृति और विरह वर्णन के कुछ नमूने अगले परिच्छेद में और पढ़िए।

———

द्वितीय परिच्छेद

जिस दिन बंजर मरुप्रदेश के तपतपाते धोरां पर रिमझिम करती वर्षा की सरस एवं शीतल बूंदें पड़ती हैं, जिस सुहागरात की ममता मयी सन्ध्या को नीम की डाल पर बैठा मोर अपनी मधुर वाणी में 'पीव आव' 'पीव आव' कह कर हृदय की सुपुप्त वेदना जगा देता है; उसी दिन नायिका अपने नायक के विरह में तड़प उठती है। प्रेमी के मधुर मिलन की चाह बरसाती नदी की बाढ़ की तरह वेगवती होकर बहने लगती है। उमड़ती हुई घटाओं से घटाटोप अम्बर जब विरह से व्यथित धरती से अपनी जलधारा रूपी भुजाओं से स्नेहालिंगन करता है तो राजस्थान के मरुप्रदेश में नायिकाओं का हृदय जो प्रिय की स्मृति रूपी आग में जलता रहा चौगुना जलने लगता है। वर्षा की वे गोल गोल शीतल बूंद आग में घी का काम करती हैं। उमड़ते यौवन की उन मदमाती एवं कसक भरी घड़ियों में वर्षा की बूंदों में अपने हृदयगगन से गरज कर नयन रूपी बदली से बरसे हुए गरम गरम आँसू मिला कर गाती है:—

लागै रै भंवरजी ! मेहूडा री छींटां
राबळी कटारी रा घाव
पधारो मारवण रा रसिया
मेलां जोऊं वाटड़ली

प्रियतम ! ये मेह की छींटे तुम्हारी कटारी के घावों से भी मुझे असहनीय हैं मेरा यौवन जा रहा है। उमड़ते हुए यौवन के रसिक भौंरे हे प्रियतम ! तुम आओ तुम्हारी प्रियतमा महल पर बाट जोह रही है।

नैणां में रावली ओलूं ने वसाय
हिया में दरसण रो उमाव
पधारो पद्मण रा कंता
मेलां जोऊं वाटड़ली

प्रियतम आँखो में आपकी याद को बसा कर, हृदय में आपके दर्शन की तमन्ना लेकर यह पद्मिनी तुम्हारी प्रियतमा तुम्हारी बाट जोह रही है। तुम क्यों नहीं आते ?

सिधाया कांई रे मेघां ने
इन्द्राणी हो—राज
रमगया मारगां में अच्छर साथ
पधारो गोरी रा हेतालु
ऊभी जोऊं—वाटड़ली

हे प्रियतम ! क्या उस इन्द्राणी ने अपने अन्तःपुर में अपने मेघों द्वारा विलास हेतु तो तुम्हें नहीं बुला लिया ? तुम तो इन्द्र से भी सुन्दर हो । रिमझिम वर्षा और सावन में स्वर्ग की अप्सरायें तो धरती पर नहीं उतर आई ? क्या तुम उनके रूप में रम तो नहीं गए ? हे गोरी (सुन्दरी) के प्रियमत ! तुम नहीं आए । मैं आपकी बाट जोह रही हूं ।

सुठौरे मोरीया ले जाऐ संदेश
गोरी तडपे मैल में.........
पायू बसे परदेस
पधारो घणा हेताल साहिबां
ऊभी जोऊं वाटड़ली

जब आकाश घटाओं से सफेद वर्ण हो जाता है जब उज्ज्वल कोर से सनी काली घटायें मन के मरोड़ सी बलखाती उठने लगती है तो मोर अपने पंखों में विश्व का सौन्दर्य भर कर नाचने लगा। उस सुहावनी बेला में नायिका ने मोर से कहा—हे मोर ! मेरे पति परदेश में बस रहे हैं. मैं महल में तडप रही हूँ। मेरे प्रियतम से जाकर कह दे कि हे प्रेम के सागर ! तुम्हारी प्रेयसी तुम्हारी वाट जोह रही है। तुम नहीं आए" जिनका मात्र यह दावा है कि राजस्थान के साहित्य में, वहाँ की भाषा में श्रृंगार का नितान्त अभाव है, वे हृदय की आँखों से सुन्दर नायिकाओं के उक्त सरल विरह गीतों को पढ़ें। उनमें कितना प्राकृतिक आकर्षण है।

घन घोरां जोरां घटा, लोरां वरसत लाग ।
वीज न मावे वादलां, रसिया तीज रमाय ॥

प्रकृति और श्रृंगार। मणि कांचन का योग। हमें लोक साहित्य में पग पग पर मिलता है। दोहे का अर्थ है धोरों पर अन्न लहलहारहा है। आकाश के उर में काली काली घटायें उमड़ रही है। बादलों में वह चमकती बिजली समा नहीं रही है। इस मन मोहक समय में मेरे योवन रूपी रस के रसिक भौंरे तीज

का त्योहार मनाओ। राजस्थान में तीज का त्योहार नारी समाज के हेतु अति महत्त्वपूर्ण होता है।

मेंबरस्या तंबू गल्या, हल कर भरिया होद।
कामण कंत चितारिया, सीख द्योनी सीसोद॥

मेवाड़ में प्रत्येक सरदार को एक निश्चित अवधि तक महाराणा के दरबार में सेवा के लिए उपस्थित रहने का नियम था। साथ ही उन सरदारों को अपने तंबू और घोड़े भी रखने पडते थे। एक सरदार महाराणा से कहता है "वर्षा हो चुकी है वह भी इतनी कि तंबू भी गल गए हैं तालाब पानी से लबालब भर चुके हैं घर सभी की प्रियतमायें याद कर रही हैं हे राणा जी! आप प्रेमियों के हृदय के भाव पढ कर इन्हें घर जाने की सीख दो।

सावण आयो साहिबा, मोर हुआ महमंत।
इण रित पीयर मोकले, कठण हियारो कंत॥

हे प्रियतम। सावन आ गया है। मोर नाच रहे हैं। प्रकृति अपने पूर्ण यौवन पर है। उसका शृङ्गार भी मन मोहक है। ये तो सुख विलास का समय है पर तुम इन सुरम्य घड़ियों में मुझे पीहर भेज कर अपने से अलग कर रहे हो, तुम्हारा हृदय बड़ा कठोर है।

मोर सिखर ऊंचा मिलै, नाचै हुआ निहाल।
पिक ठहकै झरणा पडै, हरियै डूंगर-हाल॥

राजस्थान प्रकृति का अनन्य भक्त रहा है। प्रकृति शृङ्गार की आत्मा है। प्रियतमा अपने प्रेमी से कहती है। ऊंचे शिखर पर हे प्रियतम! मोर

हर्षित होकर नाच रहे हैं। कोयल की अमृत वाणी सुनाई दे रही है। झरने बड़े वेग से बह रहे हैं। ऐसे हरे भरे पहाड़ पर मुझे सैर करने के हेतु ले चलो।

काली काजल सारखी, घटा मंडाणी आज।
आजूंणी निस अेकला, जासी किम जस राज॥

विरह व्यथित प्रेमी अपनी प्रियतमा की याद में तड़प उठता है और मन सोचता है 'काली काजल सी घटायें आज घिर गई है पर आज रात को मेरी हृदयेश्वरी मेरे साथ नहीं है। जसराज कवि जो उक्त पंक्तियों का लेखक है, कहता है कि यह रात अकेले कैसे बीतेगी? जन कवियों की ये सरल किन्तु स्वाभाविक उपमायें 'काली काजल सी घटा'' कितनी सुन्दर है?

आभ गड़ूकै वीजां अड़ूकै, मोरा धरै मलार।
कामण धरा धपांड़वा, आयो मेह उदार॥

अम्बर के आनन में गरजन है, बिजलियां चमक रही हैं। मोर मलार राग की स्वर लहरी का उच्चारण कर रहे है। ऐसे सुहावने समय में उदार हृदय मेघ अपनी प्रेयसी धरती को अपने स्नेह रस से तृप्त करने आया है।

सोला वरसां इस्तरी, मगर पचीसो नाह।
सावण सेजां पोढिये,(तो)वाह जवानी वाह॥

सोलह वर्ष की नायिका और २५ वर्ष का नायक जब सावन की घटाओं से घिरे महल में सेज पर स्नेह आलिंगन करते हैं, वह घड़ी धन्य वह यौवन धन्य है।

आज उमंगे चार जग, सुण धण री वण घोर।
रेण पपायो सेज पियु, तट दादर गिर मोर ॥

बादलों की गरज चार जनों को अति सुख कर विदित होती है रात में पपीया, सेज में प्रियतम किनारे पर मेंढक और पहाड़ो पर मोर।

आज धरा दिस ऊमग्यो, मोटी छींटां मेह।
भीजी पाग पधारज्यो, जद जाणूंलो नेह ॥

आज बड़ी बड़ी बून्दों वाला मेह अम्बर के अन्तरस्थल में उमड़ रहा है मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में खड़ी हूँ। इस रिमझिमाती वर्षा में मेरे प्रियतम ! आप अवश्य आना। तुम्हारी भीजती हुई पाग, तुम्हारे सतत् स्नेह का पुनीत प्रमाण है। डिंगल साहित्य में शृङ्गार और प्रकृति माखन एवं मिश्री की तरह घुली हुई हैं।

भर पावस सज्जण नहीं, ऊल्हरियो जसराज।
जाणूं छूं ले जावसी, काढ कलेजो आज ॥

कवि जसराज एक विरह व्यथित वियोगिनी की दशा का वर्णन करते हुए लिखते हैं—चौमासे का मध्य काल है पर प्रेयसी का प्रियतम घर पर नहीं है। यह वर्षा वियोगिनी का कलेजा निकाल कर ही लेजायगी। यह जानते हुए भी मैं क्या कर सकता हूँ।

पड़ पड़ बूंद पलंग पे, कड़ कड़ बीज कडङ्क।
सायंधण सेजां अेकली, धड धड हियो धडङ्क ॥

शब्दों की ध्वनि पाठक के सामने वर्षा का सही चित्र उपस्थित कर देती है। पड़ पड़, कड़ कड़, धड़ धड़, इन में अलग अलग भाव बोलता है और यही कवि का काव्य सौन्दर्य है। अर्थ है पड़ पड़ बून्दे पड़ रही हैं, पलङ्ग भीज रहा है, कड़ कड़ बिजली चमक रही है। ऐसे समय में साजन के बिना सजनी का हृदय धड़क रहा है।

धूम घटा कर घालियां, उर परलंभ अछेह।
बालम नित बिरसावजो, महलां रंगभ्फड मेह ॥

हाथ में हाथ डाल कर घटा घूम घूम कर आ रही है। अच्छी भड़ी लग रही है। हे प्रियतम! तुम भी अपने रङ्गमहल में इसी प्रकार अपना स्नेहरस बरसाना।

बिरखा ऋतु आयी सा।
ओजी महाराजा पावस ऋत आयी सा ॥
मौसम मन भायो सा हालां सासरे
सुरंगी ऋत आयो सा साजन सुखदायी सा।
म्हाँरे मन भायी सा हालो सासरै ॥
उठ कांठल काली उतराधी, घूम घटा गहरायी।
आवै पवन अटा पर आछा छटा लूंब लहरायी ॥
बरखा०
चारूँ दसा बीजली चमके, इन्दर भडी लगायी।
पीव ही पीव पुकार पपीहे, नेह लता सरसायी ॥
पावस०

उपवन सघण बहार अनूठी, छित हरियाली छायी ।
अंग मरोड संग तरूवर रहै, लूम लता लहरायी ॥
वरखा०

डूंगरिया हरिया हुए झरिया, भरिया ताल तलायी ।
दादरिया करिया रव दीरध, भीभरया भरणायी ॥
पावस०

पल्लव फूल वसन आभूषण, इतर पराग लगायी ।
वेल्यां मन सज धज अल बेल्या, पति तरू सूं लिपटायी ॥
पावस०

मोद मत नाचर मलार री, ललक मयूर लगायो ।
कोकिल री कल कल कहूक अब जोबन लहर जगायी ॥
पावस०

गुड्या वीर बादल दल गाजत, चपला खग चमकायी ।
मारण विरहणियां मनोज रो, फोज जाण चढ आयी ॥
वरखा०

सावण तीज मनावण सखियां, मन भावणी मनायी ।
भूलै संग भुलावण पिव नै, पीहर पावण आयी ॥
पावस०

साल्यां तणो साथ साईनां, हिय में अत हरखायी ।
आखा वार उडीकै ऊभी, वेगी देण बधायी ॥
वरखा०

सालाहेल्यां रमावै साल्यां, वातां सरस बणायी ।
होडां होड रिझावै हंस हंस जला उगीर जंवायी ।।
पावस०

सुमन संवार खूब सजधज सूं, साल्यां सेज सजायी ।
साजन तणी खास सैनाणी, मांगे सेज बिछायी ।।
बरखा०

मारग रोक खड़ी हठ माड्यां, अलबेल्यां अठलायी ।
बेहद मोल हाथ री बींटी, बालम दी बगसायी ।।
पावस०

रंग महल पोढ्या उमंग भर, रग रेलिया रचायी ।
हिक पर हेक जात बलिहारी, प्रीत रीत प्रगटायी ।।
बरखा०

सासरियो "बलदेव" सुरग, केतां कूड न कायी ।
हरख बसै हेमाचल में, जल में त्रिभुवन रायी ।।
पावस०

पावस रित आयी जी मौसम मन भायी जी ।
झिर मिर झरलायी जी सर सर परवायी जी हाला सासरे ।।

ससुराल को स्वर्ग बताया है और वर्षा में उसकी छटा कितनी मनोहर हो उठती है, यह देखते ही बनता है । सुसराल की सैर राजस्थान में विशेष कर वर्षा के दिनों में अति प्रिय होती है जिसका वर्णन कवि बलदेवदान कविया ने अपनी कविता में किया है पंक्तियों के भाव अति सरल और स्वाभाविक

हैं। सावन का सुमधुर वर्णन अति सुन्दर बन पड़ा है। पढ़ते पढ़ते पाठक का मन सुसराल की मेहमानदारी की ओर अग्रसर हो जाता है।

पनिहारी का गीत राजस्थान की आत्मा है। पनघट पर जाने वाली नारी का यह गीत हमें राजस्थान के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं स्थानीय रङ्ग का दिग्दर्शन करवाता है। राजस्थानी जीवन का आकर्षक चित्रह में पनिहारी की हर पंक्तियों में मिलता है। अमर शत बलिदानों के प्रतीक उस राजस्थान में रिम झिम करती वर्षा में प्रकृति और शृङ्गार का जो जीता जागता चित्र हमें उक्त गीत में मिलता है, वह अपने ढंग का अलौकिक है। वर्षा राजस्थान की सर्व प्रिय ऋतु है। इस ऋतु में पानी से भरे लबालब सरोवरों के तट पर जब पनिहारियों के झुण्ड के झुण्ड एक स्वर से "पनिहारी ए लो" गाती है तो राजस्थान का साकार रूप हमारे सामने उपस्थित हो उठता है। कलात्मक माधुर्य के दर्शन होते हैं इसके सङ्गीत में। मारवाड़ और मेवाड़ में पनिहारियों का मन मोहक दृश्य देखने योग्य होता है—काली काली घटाओं को उमड़ी देख वे गाती हैं:—

काली ए कालायण अमूटी ए
पणिहारी ए लो।
छोटोडी छांटां रो वरसे मेह वालाजी
भरिया नाडा नाडिया ऐ
पणिहारी ऐ लो।
भरियो ऐ समंद तलाव वालाजी
पणिहारी ऐ लो।

किणजो खुणाया नाडा नाडिया ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
आज धराऊ धूंधलो ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
सुसरेजी खुणाया नाडा नाडिया ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
पिवजी खुणाया भीम तलाव
पणिहारी ऐ लो ।
सात सहेल्यां रे झूलरे
पणिहारी ऐ लो ।
पाणीडे ने चाली रे तलाव वालाजी
पणिहारी ऐ लो ।
घड़ो न डूबे ताल में ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
ईढोंणी तिर तिर जाय वालाजी
पणिहारी ऐ लो ।
सानूं रे सहेल्यां पाणी भर चाली
पणिहारी ऐ लो ।
पणिहारी रही ऐ तलाव वाला जो
पणिहारी ऐ लो ।

वैवते ओठीड़े ने हेलो मारियो ऐ
लंजा ओठीडा ऐ लो ।
घड़ियो अखुणावतो जाय वालाजो
पणिहारी ऐ लो ।
ओरां रे काजल टीकियां रे
थारोड़ा है फीका नेण वाला जो
ओरां रे, ओढण चूंदड़ी
पणिहारी ऐ लो ।
थारोडो मेलो वेसवालाजो
ओरां रा पिवजी घर बसे ऐ
लंजा ओठीड़ा ऐ लो ।
म्हाँरोडा बसै परदेसवाला जो
के है रे सासू थारे सावकी ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
के थारो पीवरियो परदेस वाला जो
नहीं है सासू म्हाँरे सावकी रे
लंजा ओठीड़ा ऐ लो ।
नहीं म्हाँरो पीवरियो परदेस वाला जो
घड़ो तो पटकदै नी ताल में ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
चालै नी ओठीड़े री लार वाला जो

बालूं तो झालूं थारी जीभडी ऐ
लंजा ओठीड़ा ऐ लो ।
डसे तने कालो नाग वाला जो
चालै तो घडायदूं तनैं वाडलो ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
चालै तो नवसर हार वाला जो
अहड़ा तो वाड़लिया म्हाँ रे घर घणा रे
लजा ओठीड़ा ऐ लो ।
खूंट्यां टक्या नवसर हार वाला जा
हाले तो चिरादूं थारे चूड़लो ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
हाले तो दि़खणी रो चीर वाला जो
चुड़लो चिरासी घण रो सायबो रे
लंजा ओठीड़ा ऐ लो ।
ओढ़ाणयो ओढासी म्हाँरो वीर वाला जो
घडो तो भरने पाछी वली ऐ
पणिहारी ऐ लो ।
आयी फलसे री बार वाला जो
घडो तो पटकदूं ऊभी चौक में ऐ
म्हाँरा सासूजी ऐ लो ।
वेगो रे घडियो उतराव वाला जो

किण थांने मोसो मारियो ऐ
म्हाँरा बहूजी ऐ लो।
कूण थांने दीनी छै गाल वाला जो
एक ओठी म्हाँने असो ऐ
म्हाँरा सांसूजी ऐ लो।
पूछी म्हाँ रे मनड़े री वात वाला जो
देवरजी मरीसो डीघो पातलो ऐ
म्हाँरा सासुजा ऐ लो
नणदल बाई भा रे उणिहार वाला जो
थे तो बहू भाला घणा हो
म्हाँरा बहूजा ऐ लो
ओ तो थांरो ही भरतार वाला जो।

मरुभूमि राजस्थान में वर्षा का बड़ा महत्त्व है। राजस्थान के उक्त लोक गीत में वहां की पावनता का सजीव एवं हृदय को मोहने वाला चित्र है। यह वह गीत है जिसे हिन्दी साहित्य सम्मेलन इन्दौर में स्वर्गीय मुशी अजमेरी जी के मुख से पीयूष वर्षणीय लय में सुनकर इन्दौर की उपस्थित जनता उसकी रस धारा में बह सी गई थी और सम्मेलन के सभापति महात्मा गांधी तक को तीन मिनट की जगह १० मिनट तक बहा ले गई राजस्थान का हृदय इस गीत की पंक्तियों में बोल रहा है। इसमें लोक जीवन की श्रृङ्गार युक्त प्रतिमा है। उसके कमनीय रेखाचित्र मधुर सङ्गीत पूर्ण लय, मर्मस्पर्शी व्यञ्जना पाठकों का हृदय हर्षित कर देती है। नायक का व्यङ्ग भरा विनोद,

नायिका का खीजना और उसका क्रोध कितने सुन्दर ढङ्ग से अभिव्यक्त हुआ है बहू का भोलापन, सास की मुस्कराहट और मीठा उपालंभ कितने मार्मिक ढङ्ग से गीत में आए हैं? पंक्ति पंक्ति में मधुर भाव हैं वर्षा ऋतु आगई। मेघ गरजने लगे। और हुई छोटी छोटी बूंदों की वर्षा। ताल तलैया भर गए। सागर सा विशाल तालाब भी पानी से लबालब भर गया। पणिहारियाँ पानी भरने गई और आपस में पूछने लगीं— ये ताल तलैयां किसने खुदाई और किसने खुदवाया यह विशाल तालाब? ससुर जी ने ये ताल तलैया खुदवाई है और मेरे हृदयेश्वर ने यह विशाल तालाब खुदवाया है। सात साथिन अपना झुंड बना कर सरोवर पर पानी भरने को गयीं। सहेलियों ने घड़े भर लिए पर पनिहारी घड़ा न भर सकी। पावस ऋतु की मधुमय छटा में वह अपने प्रियतम की पावन स्मृति में डूब सी गई। घड़ा पानी में डाला पर आत्मविस्मृतवश वह घड़े को भर नहीं सकी। इंडुरी भी पानी में तैरने लगी। नायिका पावस की मस्ती में बेसुध थी सातों सहेलियाँ अपना अपना घड़ा उठा कर अपने गंतव्य स्थान की ओर चलदी, पर नायिका को अपने कार्य का भान नहीं हुआ। वह बेसुध सी बैठी रही। कुछ समय के बाद वह स्मृतिलोक से धरती पर आई देखा घड़ा खाली है पर भरवाता कौन? अपने चारों ओर देखा कोई घड़ा उठवाने वाला नहीं था। पर कुछ देर बाद उसे ऊंट पर चढ़ा सवार दिखा। वह उस नायिका का पति था उसे नायिका पहचान न सकी। सवार के समीप आने पर उसे घड़ा उठवाने के हेतु नायिका ने निवेदन किया। उत्तर में उस सवार ने कहा—"पनिहारी! तेरी सब सहेलियों ने काजल की बिंदी लगा रखी है, पर तू वैसा नहीं कर सकी, तेरे नैन फीकें हैं? ऐसा क्यों है? सबने सुन्दर साड़ियों ओढ़ रखी

है पर तेरा वेश मैला है, ऐसा क्यों है ?" पनिहारी ने कहा—'ओठीं तुम चतुर हो । दूसरी स्त्रियों के प्रियतम घर पर हैं पर मेरे पति घर पर नहीं हैं। ओठी ने कहा—"विदित होता है कि तू किसी दुख से सतप्त है । सम्भव है तेरी सास सौतेली हो वा पीयर परदेश है।" नायिका ने कहा—न तो मेरे सौतेली सास है न मेरा पियर परदेश में हैं। पर खेद है कि मेरे प्राणनाथ परदेश में हैं इसी कारण मेरी यह स्थिति है। पति ने जो ऊंट के सवार के रूप में पनिहारा के समक्ष था उसे साथ चलने के हेतु कई प्रलोभन दिए पर वह खुश होने की जगह क्रोधित हो उठी और उसके शब्दों एवं प्रलोभनों के प्रति घोर उपेक्षा प्रकट की। वह नागिन सी फुंफकार उठी और कहा—"हे ओठी ! जलादूं तेरी जिह्वा, जिससे तेने मुझे यह सब कहा । भगवान करे तुझे काला सांप डसे" ओठी चुपचाप उसकी भाव संज्ञा समझ कर चल दिया । पनिहारी क्रोध में सनी घड़ा लेकर घर आयी। उसने दरवाजे पर आकर कहा—जल्दी इस घड़े को उतरवाओ नहीं तो इसे फेंक देती हूँ। सास ने कहा—ऐसी क्या बात हुई ? किसने तुमको ताना मारा ? किसने तुमको गाली दी ? बहू ने सारी कथा कह दी। सास समझ गई और मुस्करा कर कहने लगी। वह तो तेरा पति था। उस समय उस नायिका के हृदय की क्या स्थिति हुई होगी। यह भुक्त-भोगी ही जान सकता है ।

बहारों की पंखों में उड़ता हुआ मदमाता यौवन जब जीवन की फुलवारी में चोर की तरह चुपचाप आ जाता है तो हृदय के शत् शत् प्रसून गद् गद् हो उठते हैं। उमड़ते यौवन के उपवन में मधु मिलन की कलियां मुस्कराहट ले खिल उठती हैं। प्राणों से प्यारी नायिका ठम ठम करती सोलह

शृंगार किए रंग महल में मधुर प्यार की अपने हृदय में धड़कन लेकर प्रिय के स्नेहालिगन में आती है तो उस समय दोनों हृदयों की क्या दशा होती है वे चित्रसारी की मूक दीवारें भी सही बताने में असमर्थ हैं । राजस्थान के लोक गीतों में उन मधुर भावनाओं का रस लबालब भरा हुआ है ।

सजने ढोलाजी सोले सणगार
रसवती मैलां आयी ऐ मदछकिया थारी बोली प्यारी सा
ठमके जांझर रणकार साथण देखे
म्हारा घणा हेतालु सरदार सलगत आछी लागै सा
होट तो गोरी थारा लाल रे गुलाल
बालो देवादे पद्मण प्यारो लागो सा
झंपे रे दीवो मैलां उजियार
मत खींचों साड़ी रो चीर प्यारा लागो सा
रस भेद न जाणूं ऐ अलबेला
दीवो देय बुझाय प्यारा लागो सा
पीली ने परभातां म्हारे जाणो रे वार
वलतो सेरों री शिकार प्यारा लागोसा

सोलह शृंगार सजकर प्रियतमा महलों में आयी । रस युक्त यौवन था उसका । ठम ठम झांझर की झणकार सुनाई दे रही थी । नायिका की सहेलियाँ छिप छिप कर अपनी साथिन को प्रियतम के पास जाते देख रही थी । प्रियतम ने प्रियतमा को आते देखा । उसके गुलाबी अधरों को घूंघट खोल कर देखा और कहा—प्रिये । मुझे चुम्बन लेने दो । नायिका ने कहा—नाथ !

दीपक जल रहा है, कोई देख लेगा। नारी की स्वाभाविक लज्जा का कितना हृदयग्राही वर्णन है। राजस्थान अपने रंग की घड़ियों में भी कर्तव्य और वीरता को भूला नहीं है। तभी तो वह कहता है मुझे प्रातः ही लुटेरों को मारने जाना है और लौटते शेरों की शिकार करनी है। कितने ऊंचे भाव हैं।

वर्षा राजस्थान में आमोद प्रमोद की ऋतु है। उस समय पुराने से पुराने सम्बन्ध भी वर्षा की हरियाली के साथ हरे हो जाते हैं। परिणिता स्त्री के साथ भी परकीय का सा रोमांस करने की भावना इस ऋतु की अपनी विशेषता है। राजस्थान का निम्नांकित गीत इस प्रसंग की साक्षी देगा। देहाती जीवन में कितनी सरसता साकार होकर वर्षा की बूंदों के साथ उतर पड़ती है यह नीचे लिखे लोक गीत से जाना जा सकता है।

पाणीड़े नै जातां गोरी रा सायबा
प्यारी घण रै कांकरड़ी कुण मारी म्हाँरा राज
म्हें हंस मारी जी गोरी धण
थांरै कोठे सी लागी म्हारा राज
जी इंडी के लागी गोरी रा साहिबा
प्यारी धण पै नींबूड़ा कुण बाया म्हारा राज
म्हे हंस बाया जी गोरी घण प्यारी
थांरै कोठेड़ै सी लागी म्हारा राज
बैयां के लागा गोरी रा सायबा
छतियां म्हारी राम उबारी म्हारा राज

जी महलां में जातां गोरी रा सायबा
प्यारी धण पै लाडूड़ा कुण राल्या म्हारा राज
म्हैं हंस राल्या म्हारी गोरड़ी
प्यारो धण रे कोटेड़ै सी लागी म्हारा राज
जी घूँघट के लागी गोरी रा सायबा
बेसर म्हारी राम उवारी म्हारा राज
थारी तो घाली गोरी रा साहिबा
जङ्गल हिरणी होय जासूं म्हारा राज
थारी तो घाली गोरी रा साहिबा
जलमें माछली होय जासूं म्हारा राज
जे थे धण होसो जङ्गल हिरणी
पन्ना मारू असल शिकारी म्हारा राज
जे थे धण होसो जल री माछली
पन्ना मारू असल तरवाई म्हारा राज
थारी तो घाली गोरी रा साहिबा
धोरां दूवलती हो जासूं म्हारा राज
जे धण होसों धोरां दूबड़ो
पन्ना मारू अलल बछेरो म्हारा राज
थारी तो घाली गोरी रा साहिबा
में तो पीवरिये उठ जास्यां म्हारा राज
जे धण जासो थांरै बाप रै

पन्ना मारू लेर्यो लाग्या आसी म्हारा राज
थे धण खावो मोठ'र बाजरो
पन्ना मारू लाड जंवाई कहासी म्हारा राज

पति अपनी पत्नी के साथ परकीय नारी की तरह विनोद करता है। गीत की पंक्तियों में पति पत्नी का जो वार्तालाप बन पड़ा है अति सुन्दर है एवं प्रगाढ प्रेम का उलत उदाहरण है पति का कंकरी फेंकना प्यारी के लगना। महलों में आते लड्डू फेंकना और क्रमशः एक दूसरे के प्रति रूठने के भावों में प्रेम का आदान प्रदान कितना मौलिक है। पति अपनी स्त्री को हर तर्क में हरा देता है। वह जगल की हिरणी बनने को कहती है तो पति शिकारी बनना चाहता है। स्त्री मछली बनने को चाहती है तो वह तरवायी। स्त्री धोगों पर उगने वाली दूब बनने को चाहती है तो पति उसे चरने के हेतु घोड़े का बच्चा। स्त्री अपने बाप के यहाँ चली जाने को कहती है तो पति कहता है प्रियतमा ! तुम यदि अपने बाप के यहाँ पर चली जाओगी तो मैं दामाद बन कर आऊंगा। तुम्हें मोठ बाजरा खाने को मिलेगा पर चूंकि मैं जमाई हूँ अतः मेरा आदर होगा।

प्रकृति वर्णन करते हुए राजस्थान के कवि अपने स्वाभाविक वीर रस को नहीं भूले हैं। वर्षा वर्णन का एक गीत इस प्रसंग के हेतु पर्याप्त होगा। श्री धर्मशील ने पावस युद्ध में बड़ा ही मोहक चित्रण किया है। जिसका अर्थ है। यह वर्षा नहीं सुरराज की सेना है। आकाश के उर में छाई ये काली घटायें उनकी सेना के बलवत हाथी हैं। मेघों का यह गर्जन युद्ध के बाजे हैं। सुरपति दानव काल को जीतने के हेतु सजधज कर चल पड़े हैं।

घनघोर घटाओं की यह घरघराहट उनकी सेना की चाल है। सूँ सूँ करता यह समीर और उसकी आवाज तीर है। गगन मंडल की घड़घड़ाहट दुश्मन का क्रोध है। तड़तड़ करती चमकती बिजलियाँ तड़ तड़ कर दागने वाली तोपें हैं। बादलों की झड़ी मानों योद्धाओं का जूझना है। काल परास्त हुआ इन्द्र विजयी हुए अचला हरी हो गई। पृथ्वी के उर से प्रेम पानी के रूप में प्रवाहित हो उठा। सभी के मन मुग्ध हो गये।

सबल मैंगल बादल तणा साज करि
गुहिर असमाण नीसांण···गाजें
जग जोरैं करण काल रिपु जीपवा
आज कटकी करी इन्दराजे
तीख करवाल विकराल बिजली तणी
घोर माता घटा घर—र चालै
छड़िया सांवणी साक छांटां तणी
चटक माहें मिल्यो कटक चाले
तड़ातड़ो तोब करि गयण तड़के तड़ित
महा झड़ झड़ि करि भूंझ भंग्यो
कड़ाकड़ि क्रोध करि काल कटका किया
खिणक रै बल खल संबल खड़्यो
सरस वनां सगल कीध सजल थल
प्रगट पहुवी निपट प्रेम प्रथलां
लहकती लछि वली लील लोको लही
सुध मन करे धर्मशील सगला

श्री जोगीदान कविया की झमाल में वर्षा और शृङ्गार का वर्णन कमाल बन पड़ा है:—

[१]

सावण मास सुहावणू वसुधा करै बणाव
पिवरो मन अगम परख चढियो महिला चाव
चढियो महिला चाव पौन पुरवाईयां
झुकै बेल झड लाग बिरछ गलवाइयां
बोले चातक वेण सैण सर सावणू
पीव हु पीव पुकार प्रेम उपजावणू

[२]

काजल सा काला कुरट बादल झबकै बीज
थल पर थल सथापणा प्रेमासकत पसीज
बरसै बारूम्बार विपुल विस्तार पै
लुलि लुलि आभा लूम्ब धरण चित धारणा
आलिंगन कर उमग विश्व ले वारणा

[३]

हरिया डूङ्गरिया हुआ नीझर झरिया नीर
भरिया जल पाहन बिचै सुच्छ अमल तासीर
सुच्छ अमल तासीर फबै अति फूटरो
मज्जण पीवण मधुर स्वाद मधु घूण्टरो

पीवे पंछी प्रगट चहूँ बळ चाव सूं
पांख रह्या फैलाय बिहूँ बळ भाव सूं

[४]

भाखरिया हरिया हुआ पोखर भरिया पास
तरवरिया प्रफुलित वया नीर निखरिया खास
अजूल जल ओपंत गिरवरां गेल पै
पाथर फटिक प्रमाण जोति नग जाणजे
हीर रास उणहार पहाड़ पिछाण जे

[५]

पलकन डटे पयोरी बिरछ पात पर बून्द
पड़े भोम पर पाधरा मनु मुकता धर खूंद
मनु मुकता धर खून्द छांट छिटकावणी
मूसल धारां मेह पहूमो......पटकावणी
धर अंबर इकवार पड़े परनालियां
खूब लगे झड़ खरस झरोखों जालियां

[६]

वीर बहूटी आज ही भुव पै मखमल भांत
सांप्रत सावण तीजणी खूब करो सब ख्यांत
पड़ी इन्द्र मुख पीक वसुन्धर—बांटणी

जाणक बधू नवल्ल चलै मग जोहती
हरि पै आंगण हरख मदन मन मोहती

[७]

घटाघुमड़ उतराधरो चढी व्योम घहराय
छटा चिमक तिण में छिपै थिरक थिरकथहराय
थिरक थिरक थहराय मृदङ्ग धुनि मादलां
मेह वधाउ सुमद अगाऊ—वादलां
ओसर है इक सार रसा सर सावणी
नीजां तणूं, त्यूंहार समै सुभ सावणी

[८]

थळ पे जळ ही जळ थयो बहे नदी बेथाग
बंधा भर भर ऊझल्या बणिया नाला माग
बणिया नाला माग वहै दुत वाहली
मेह ओसर में बहै नाला अर नाहली
दादर देवैं दाद इन्द्र दातारियां
वदै चातकी वैण पीव पिणहारियां

[६]

इन्द्र धनुष ओपै अधिक सज सतरङ्गो साज
पावस जाणक पैरियो लैर्यो भोत दराज

लैरयो भोत दराज अवन अम्बर अड्यो
पन्ना हीर पुखराज जवाहर सूं जड्यो
अवनी री खुल उड़ी उच्च नभ आटड़ी
के सावण री तीज पाड़ली पाटड़ी

[१०]

झूलै झूलै झूमती तीजण सावण तीज
तरू बादल छायां तलै भेली अबकै वीज
भेली अबके वीज पुरन्दर री परी
सतरङ्गी पोसाक जगमग हुँ जरी
मचकी देवैं मचक हिंडोलें हींड़ती
देव वधू भी देख सकुच कर मीड़ती

कवि की भावनायें कितनी अलकृत पर सरल है। कवि राजस्थान भारती को राजस्थान का हृदय पहचानने के हेतु अराजस्थानी पाठकों के हित में हिन्दी के समीप ले आया है। उसकी झमाल वर्षा का साकार रूपक है। राजस्थान के साहित्यकार न केवल शौर्य पर प्रकृति के पुजारी ही रहे हैं। बंजर प्रकृति के अन्दर भी उन्होंने सौन्दर्य को पहचाना है वे उसके अन्दर रम से गए हैं।

म्हारा आंखड़ियां रो तारो दुलारो प्यारो हैं मुरधर देस।
सोनै रै डूङ्गर ज्यूं चमकै रेतड़ली रा ढेर
पन्नै ज्यूं जड़ियोड़ा उण में मुरधर थारा केस
म्हारा............

खेजड़ियां नै बावलियां नै बाजरियां रा पूख
तीन तिलोकी सूं होवै निराळा मुरधर थारा रूंख
म्हारी............

ऊची धोती और अङ्गरखी डोढ़ो बांको पेच
रैवण ने भगवान हमेसा दीजे मुरधर देस
म्हारी............

मरुभूमि के निवासियों के उक्त गीत की कुछ पंक्तियें जो मैंने प्रसंगवश दी हैं मरुभूमि के प्रति प्रगाढ़ प्रेम की परिचायक हैं—

"रेवण ने भगवान हमेशा दीजे मुरुधर देस"

पंक्ति में उन गीतकारों की मरुभूमि की प्रकृति एवं जीवन के प्रति प्रगाढ़ ममता बोल रही है। वहाँ के वृक्ष कैर, खेजड़ी और बबूल उन्हें प्रिय हैं। वे तीन लोक से न्यारे हैं। मरुभूमि के टीले मानों सोने के पहाड़ हैं और उनमें उन पर खड़े कैर के वृक्ष मानों पन्ने जड़े हुए हैं। ऊची धोती, अंगरखी और टेढ़ी पगड़ी वहां का बाना है। वेश है। वे भगवान से प्रार्थना करते हैं कि ऐसा ही देश बार बार हमें रहने को देना। ऐसा ही मांड राग में मेवाड़ की सुरम्य महिमा का गीत गाया जाता है। जिसमें मेवाड़ की सुरम्य प्रकृति एवं उसके सपूत बेटों का बलिदान अंकित है।

सावण तो लाग्यो पिया भादवो
बरसण लाग्यो मेह
ऊपर पुराणा पिया पड़ गया तिड़कण लाग्या—बांस

बादल में चमके पिया बीजली
मे'ला में डरपे घर नार
असी तो टकां री ढोला चाकरी
लाख टकां—री नार
अब घर आजो गोरी रा साहिबा।

विरह से व्यथित गोरी के पत्र की उक्त गीत में भावनाएं हैं, जो उसने अपने प्रियतम को घर आने के हेतु लिखी थी। प्रियतम ! सावन और भादों का माह आ गया है। रिम झिम करती हुई वर्षा हो रही है। घर का छप्पर पुराना पड़ गया है। बांस तड़क रहे हैं। ये सब बातें नायिका इसलिए लिख रही है कि नायक अपने घर की स्थिति को बिगड़ी जान घर आ जाय। आगे वह लिखती है कि हे प्रियतम ! बादलों में बीजली चमक रही है और महल में तुम्हारे बिना तुम्हारी प्रेयसी अकेली डर रही है. पति पराधीन था नौकरी थी वह घर न आ सका। इस पर उसने चिट्ठी में बेटी के व्याह की खबर लिखी, कुंवर के जन्म और स्वयं के मौत के झूठे समाचार लिखे। पति ने उन्हें सत्य समझ कर नौकरी छोड़ दी। वह गांव की ओर यह कह कर चल पड़ा "आल्यो राजाजी थांरी नौकरी जी राज ओल्या थारो देस" जब वह गांव आया तो पनघट पर समाचार पूछे नायिका की पोल खुल गई पनघट वालियों ने कहा—

मांय कातै है थारी कातणो जी राज
बैण ऊटेरे—सूत

नार है थांरी रसोया रे मांय
टाबर खेले थारे बारणे जी राज

यह सुन कर उसे अपनी मूर्खता पर पछतावा हुआ, साथ ही अपनी प्यारी का अपने प्रति इतना प्रेम देख कर हर्ष भी।

मारवाड़ में बबूल के वृक्ष ज्यादा होते हैं। विरहणी अपने घर के पास खड़े बबूल को संबोधन कर गाती है:—

बावलि़या कुण रे लगायो थारो पेड़
बावलि़या कुण रे सपूती थाने सींचियो

हे बबूल ! तुम्हारा बीजारोपण किसने किया ? और किस सपूती ने तुझे सींचा ?

गोरी ऐ सुसरैजी लगाया म्हारा पेड़
सासू सपूती म्हांने सींचियो

हे सुन्दरी ससुरजी ने मेरा पेड़ लगाया है और तुम्हारी सपूती सास ने मुझे इस मरुभूमि में सींच कर बड़ा किया है।

बावलि़या कतरा वीघां रो थारो पेड़
बावलिया कतरा वीघां में थारी छावली़

हे बबूल कितने बीघों में तुम्हारा पेड़ है और कितने बीघों में तुम्हारी छाया है।

बावलि़या कुण रै बैठेला थारी छांव
बावलि़या कुण रै सपूती काते कातणो

तुम्हारी छाया में हे बबूल ! कौन बैठेगा ? तुम्हारी छाया में कौन सपूती सूत कातेगी।

गोरी ऐ सुसरोजी बैठेला म्हारी छांय
सास सपूती काते कातणो

ससुरजी मेरी छांह में बैठेंगे और सपूती सास मेरी छांह में बैठ कर सूत कातेगी।

बावलिया कुण रे सरीसो थारो फूल
बावलिया कुण रे सरीसी थारो पातड़ी

हे बबूल किसके जैसा तेरा फूल है ? और किसके जैसी फूली है।

बावलिया कठेरे मेलूंली थारो फूल
बावलिया कठे रे मेलूंली थारी पातड़ी

हे बबूल ! तुम्हारा फूल और पातड़ी कहाँ रखूंगी।

गौरी ऐ सोने रे सरीसो म्हारो फूल
रूपे ऐ सरीसी म्हारो पातड़ी
गौरी ऐ पेयां मेलो म्हारो फूल
डाबा में मेलो म्हारी पातड़ी

पेटी में मेरा फूल रखो और डिब्बे मे मेरी पातड़ी रखो।

बावलिया अबकी ओलङ्ग सुसराजी ने मेल
अब को सियाळो भेळो काढस्यां

हे बबूल किसी प्रकार सुसरजी को प्रवास में भेज दे मैं अबकी सर्दी अपने प्रियतम के साथ व्यतीत करूंगी

गोरी ऐ सुसरेजी री जावे बलाय
म्हारे नै सरीसा कुंवर घोड़े चढ़े

हे सुन्दरी तुम्हारे ससुर प्रवास को क्यों जायेंगे जिनके मेरे जैसे नौजवान पुत्र वीर घोड़े चढ़ने योग्य है।

बावळियां अबकी ओंलङ्ग जेठजी ने मेल
बावळियां अबको उनालो भेळो काढसां

हे बबूल अबकी बार मेरे पति की जगह जेठजी को प्रवास में (राजा की नौकरी में) भेज दे। अबकी गर्मी हम साथ बितायेंगे।

गोरी ऐ जेठजी री बड़का बोली नार
ऊठ—सवारैं झगड़ों बा करै

सुन्दरी तुम्हारे जेठजी की नारी बड़ी कटु बोलती है यदि उन्हें भेजू तो रोज उठ कर मुझसे झगड़ा करेगी।

बावळिया अबकी आलङ्ग देवरिया ने मेलां
बावलिया अबकी तीजां भेळी खेलसां

हे बबूल ! अबकी बार प्रिय की जगह देवर को भेज दे अबकी सावन की तीज का त्यौहार अपने प्रियतम के साथ मनाऊंगी।

गोरी ऐ देवरिया री भोळी भाळी नार
साँझ पड्यां बिलखी फिरै

हे सुन्दरी तुम्हारे देवर की नारी भोली-भाली है उसके जाने पर वह मुर्झा जायेगी। सन्ध्या के समय बिलखती फिरेगी।

बावलिया अबकी ओलङ्ग साथीड़ां ने मेल
बावलिया अबको—चौमासो भेळो काढ़स्यां

बबूल अबकी बार प्रिय के साथियों को ही भेज दे अबकी वर्षा हम साथ बितायेंगे।

गोरी ऐ साथीड़ो री आमो सामी पोल
ऊठ—सवारे जाझा अलँभा

हे सुन्दरी साथियों का घर सामने ही है उनकी प्रियतमायें नित सवेरे उठ कर उपालंभ देंगी।

बांवलिया इतरा में थे ही पूत कपूत
बाललिया ऊभी छोड़ी रंग महल में

क्या इतने लोगों में तुम ही पूत कपूत हो जो अपनी प्यारी को छोड़ कर जा रहे हो ?

गौरी ऐ इतरा में म्हे ही ऐ सपूत
म्हे ही सजावां राजाजी री चाकरी

हे सुन्दरी मैं ही इतने लोगों में सपूत हूँ और मुझसे ही राजाजी की नौकरी सज सकती है। उक्त लोक गीत में बबूल को सम्बोधन कर अन्योक्ति के रूप में अपने प्रियतम को न जाने का आग्रह करती है। स्वयं नारी की स्वाभाविक लज्जावश अपने प्रियतम को कहने में असमर्थ है मरुभूमि के लोक गीतों में

हमें हिन्दी के छायावाद के दर्शन होते हैं। नायिका बबूल से वार्तालाप करती हुई हमारे सामने चित्रित हुई है। राजस्थान में इसी प्रकार कसूंबा भी गाया जाता है जिसके दो पद पाठकों के सामने रख रहा हूँ जो हृदय को हिला देने की क्षमता रखते हैं।

[१]

आयी रे आयी मारू सावणिये री तीज
राय सइयां ने कसूंबो रे म्हारा गाड़ा मारू आढ़ियो
म्हांने मारू कसूंबे रो जाओ चास
राय थे सिधावो इडरगढ चाकरी

[२]

चाकरडी रे मारू थांरे हालीडे ने मेल
राय अबके रे बरसाले म्हारा माढ़ घर बसो
हालीडे रो गवरादे जावै रे बलाय
राय हालीडे रा वाया म्हांले मोती नीपजे

कसूम्बो, पोमचो, पीलो, चून्दडी, चीणोटियो ये सभी स्त्रियों के विभिन्न प्रकार की ओढनियों के राजस्थानी नाम हैं। ऋतु के अनुसार उन्हें ओढ़ा जाता है। वर्षा की ऋतु आई है प्यारे मदमाता यौवन उमर रहा है। ये सुख विलास की घड़ियां है। इस सुरंगी ऋतु में मैंने कसूम्बा ओढ़ा है तुम इडरगढ़ की नौकरी जा रहे हो। नाथ! तुम अपनी जगह अपने हाली को भेज दो पर पति उसका क्रमशः बबूल के गीत की तरह प्रतिवाद करता है। जब मेघ गरजता है, बिजली चमकती है रिमझिम बून्दें बरसती हैं उस

समय अपने प्रेम मंदिर से देवता को कौन पषाण हृदया नारी सीख देगी। राजस्थान के लोक गीतों में हमें इसी भावना के कई गीत मिलते हैं। नींमड़ी नींबू जामून आदि कई वृक्षों को सम्बंधन कर ये गीत गाए जाते हैं। नींबूड़े की कुछ पंक्तियें पाठकों के समक्ष रख रहा हूँ।

जे थे पना मारू ओलङ्ग जाय वारो धण वारी ओ हंजा
वरज चढ़ोनी आभा वाजळी ओ राज
वीजळी धण वरजी न जाय वारी धण वारी ओ हंजा
सावण भादवो ऐ चमके वीजळी जी राज
जे पना मारू आलङ्ग जाय वारी धण वारी ओ हंजा
वरज चढ़ो वन रा मोरिया जी राज।
मोरला गोरी धण वरज्या ऐ न जाय वारी धण वारो ओ हंजा
आ ऋतु बोलै ऐ मोरुला सुहावण जी राज
जे थे पना मारू आलङ्ग जाय वारी धण वारी ओ हंजा
वरज चढ़ो नां ऐ वागां मांयली कोयल जी राज
कोयळड़ी वरजी न ऐ जाय वारी धण वारी ओ हंजा
वो बोले ऋतु आयां आपरी जी राज
जे पन्ना मारू आलङ्ग जाय वारी धण वारी ओ हंजा
वरज चढ़ो नी पड़ोसण को दिवलो जी राज
पड़ोसण को दिवलो न बरज्यो जाय वारी धण वारी ओ हंजा
वांका परण्या घर बसै जी राज
जे थे पन्ना मारू ओलङ्ग जाय वारी धण वारी ओ हंजा
विष को प्यालो थांरी धण ने दे चढ़ो जी राज।

विरहणी नायिका के हृदय की किनारों को फोड़ निकलता है अपने हृदय मंदिर के देवता को परदेश जाते देख प्रेयसी का हृदय टूक टूक हो गया वह अपने प्रियतम को कहने लगी मेरे घनश्याम ! तुम जा रहे हो पर अम्बर में उठी काली घटाओं में चमकने वाली बीजली जो तुम्हारे चले जाने के बाद अपनी चमक से मुझे घायल कर देगी कह जाओ कि वह न चमके। इन मयूरों को आदेश दे जाओ कि वे तुम्हारी वियोगिन की व्यथा को दुगनी करने के हेतु न बोलें। पड़ोसिन को कह जाओ अपनी चित्रसारी में दीपक न जलाए उसे देख कर मैं जल मरूँगी। इन सभी बातों का तुम न कर सको तो एक बात तो अवश्य करो अपनी प्रियतमा को अपने हाथों से विष का प्याला दे दो मैं मर जाऊँगी। प्रति उत्तर में पति कहता है-प्रिय ! सावन भादों में बीज का चमकना मयूरों का बोलना उनका अपना नैसर्गिक कर्म है। पड़ोसिन के पति घर पर है पति के घर होने पर अपने घर को दीपमालिका से जगमगाना उसका धर्म है। मेरी प्यारी ! यह कैसे हो सकता है कि मै तुम्हें जहर दे दूं। तुझ जैसी सुन्दरी के हेतु पीने को जहर नहीं दूध है। जहर तो दुश्मन को दिया जाता है।

अपने पति के संग सोने के हेतु नायिक अपने ढोलिये के निर्माण के हेतु बढ़ई को किन सुन्दर शब्दों में आज्ञा देती है।

खातीरा तू मोल चंदण रो रूख काढ़ घड़ळाजे रङ्ग रो ढालियो
आया पाया रतन जड़ाव ईसां ढळावो जाभा हीङ्गळू
चमचीर बेझ बणाय दावण घलावो मखमूळरी
सूआ वरणो सोड़ भराय गाल मसीरा गादीगींड़वा

ढोळणी ने चोबारे चढ़ांय ढोलो मारूणी दोनों पोढ़सां
खातीड़ा रे असल गवार जोड़ो जारावर ढोळियो सांकड़ो

बढई तू चन्दग का पलग बना ला प्रियतम उस पर सोयेंगे चारों पाये रत्न जड़ित हों, इसें(पाट)हींगलू से पुती हुई हों तनाव की रस्सी मखमल की हो, हरे रंग की सोड़ हो, और नाना प्रकार के तकिये हों। पलंग बन कर तैयार हुआ चित्रसारी में बिछाया गया पर अफसोस। प्रेमियो की जोड़ी भारी थी और पलंग था संकीर्ण। प्रातःकाल बढ़ई को नायिका ने उपालंभ दिया।

एक नायिका अपने पति को पत्र लिख रही है:—

ऊजड़ खेड़ा फिर वसै, नरधनियां धन होय।
गया न जोवन बावड़ै, मूंआं न जावै कोय ॥

हे प्रियतम ! तुम परदेस बस रहे हो। धन की तुम्हें बहुत लगन है पर क्या तुम यह नहीं जानते कि उजड़े शहर फिर बसते हैं, निर्धन पुनः धनी होते हैं पर मरने पर कोई इन्सान आज दिन तक न जिया न यौवन पुनः लौट कर आया।

साजन साजन मैं करूं, साजन जीव जड़ीह।
लिखदूं कोरे चूड़ले, वांचूं घड़ी घड़ीह ॥

हे प्रियतम मैं तुम्हारा नाम प्रतिक्षण पुकार पुकार कर तुम्हें याद करती हैं। मेरे कोरे चूड़े पर तुम्हारा नाम अंकित कर दिया है और उसे बार बार पढ रही हूँ।

जिण बिण घड़ियन जाय, जमवारो किम जावसी
हूँ बिलखंती थाय, जोगण करग्यो जेठवा

हे प्रियतम जेठवा तुम्हारे बिना एक क्षण भी मैं नहीं बिता सकती थी तुम मुझे बिलखती—छोड़ कर न मालूम कहां पर चले गए यह सारी उम्र तुम्हारे वियोग में मैं योगिन बन कर कैसे काटूंगी ?

टोली सूं टलतांह, हरणां मन माठा हुवे
बाळां बिछड़तांह, जीवां किण विध जेठवा

हे प्रियतम जेठवा। हिरणों की टोली भी जब बिछुड़ जाती है हिरणी बिछोह के कारण तड़प मरती है तो मेरे पास नारी का कोमल हृदय है तुम्हारे बिछोह में कितने दिन तक जीवित रहूँगी।

बळे रे सांसड़ळी आग रा अङ्गार
ऐ जी लसकरिया पनजी वरे पधार
अडवूं आंसूड़ा उठा आग में ऐ जी
ऐ जी ख्याला होग्यो ससार
पधारो गोरी रा साहिबा,
मानो मारवण री मनवार
ऐ जी ऐ गोप्यांरा स्याम
आप तो शङ्कर उणयार,
पारबती जोवे वाहट
पधारो हीरो पनांरा जोड़ाऊ

ऊभी सज सणगार
सूनोड़ी वाड़ी रा माली
पायी रे प्रेम तणी धार
खावे रूंख ने चांदणी रे
सेजां पधारो मारवण रा ढोला जी ओ ।

राजस्थान के उक्त लोकगीत की व्याख्या करते समय कामायनी के लेखक स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद की स्मृति हो आती है । उनके आँसू के उद्‌गार इस राजस्थान के लोकगीत के समीप से जान पड़ते हैं । कौन जाने राजस्थान के उक्त लोकगीत का अज्ञात स्वर कार प्रसाद के रूप में अवतरित हुआ हो ।

शीतल ज्वाला जलती है
ईंधन होता दृग जलका
यह स्वांस व्यर्थ चल चल कर
करती है काम अनिल का

ठीक यही भावनायें राजस्थान के उक्त गीत में हैं । गीतकार ने एक नायिका के विरह का वर्णन बड़े ही अनूठे ढंग से किया है । स्वांस अंगारों की तरह जल रही है । मेरे प्यारे पतजी तुम घर पर आओ मैं तुम्हारे विरह में तड़प तड़प कर मर रही हूँ । आँसू का ईंधन जला जला कर इस शून्य संसार में तुम्हारे विरह के गीत गद्‌गद् स्वरों में गा रही हूँ । मेरे अरमान की दुनियां प्रियतम जल कर खाक हो गई है । मेरे घनश्याम मैं तुम्हारी प्रियतमा गोपी ब्रज से बिछुड़ गई हूँ । तुम्हारे चले जाने के बाद मेरे हृदय पर क्या बीत रही

है यह शब्दों का सामान नहीं है । तुम तो शंकर की तरह कहीं जाकर समाधिस्थ हो गए पर क्या तुम्हें यह पता नहीं कि तुम्हारी प्रियतमा पार्वती तुम्हारे हेतु यहां पर प्राण दे रही है तुम पाषाण बन गए यहां पर मेरे हृदय में विरह का दरिया उमड़ रहा है। मेरे शून्य जीवन के उपवन में प्राण प्यारे तुमने प्रेम के पेड़ लगाए पर बनमाली। विरह की गर्मी में वह उपवन तो उजड़ा जा रहा है क्या तुम नहीं आआगे ? तुम्हारे स्वागत में सोलह शृंगार सजकर बाट जोह रही हूँ। मेरे हीरों और पन्नों का अपनी सतर्क बुद्धि से प्राप्त करने वाले प्रियतम ! तुम्हारी प्रेमिका तुम्हें पुकार रही है क्या तुम नहीं आओगे ? गीत में कितनी मनोहर भावनायें हैं। इन लोक गीतों में आज की जो कल्पनायें सर्वोतम मानी जाती हैं वे सैंकड़ों वर्षों पहले राजस्थान के देहाती जीवन में मिलती हैं। वे अपने ढंग की बेजोड़ हैं।

प्रियतमायें सदा प्रेमी के हृदय में बसना चाहती है। उनको उन्हें जीतने का बड़ा चाव होता है । राजस्थान में मरवणनाम का गीत गाया जाता है जो बहुत ही हृदय ग्राही है।

> **हे सोना नै सरीसी धण पीलरी, हो राज**
> **राज ढोला राखो नो थांरे हिवड़े रे माय**
> **परभाते सिधावजो आज रेवोनी आलीजा ओ राज ॥१॥**

उसका व्यक्तित्व बहुत महंगा है उसे सदा अपने हृदय मंदिर में स्थान दिए रहो। मेरे रसिक प्रियतम आज रात्रि को तो अपनी प्रियतमा की सेज पर ही बिताओ प्रभात होते ही भले ही चले जाना।

रूपा नै सरीसी थांरी धण ऊजळी हो राज
राज ढोला राखोनी मुठड़ी रे मांय
परभातै सिधावजो आलीजा ओ आज रेवी नी रात

रूपे सरीखी तुम्हारी प्यारी उज्ज्वल है। मेरे प्यारे उसे तुम अपनी मुट्ठी में रखो। मैं एक पल भी अपने प्रियतम से दूर नहीं होना चाहती।

मोत्यां रे सरीसी थांरी धण निमली ओ राज
राखो नी कानां रे मांय
परभाते सिधावजो आलीजा ओ आज रेवोनी रात

मोतियों के समान तुम्हारी प्रियतमा निमल है। मेरे प्राणनाथ प्यारी रूपी मोती को अपने कान में जड़ दो।

हीरां रे सरीसी थांरी धण चिलकणी हो राज
राज ढोला राखो नी थांरे कंठां रे माय
परभाते सिधावजो आलीजा ओ राज रेवो नी आज रात

तुम्हारी प्रियतमा हीरां सी चमकीली है। मेरे रसिक उसका तुम चमकना कठा बना लो जो तुम्हारे हृदय पर शोभा देगा। प्यारे आज रात यही पर रहो प्रभात को चले आना।

पानां ने सारीसी थांरी धण राचणी हो राज
राज ढोला राखोनी थांरे मुखड़े रे मांय
परभाते सिधावजो आलीजा ओ राज रेवो नी रात
लूंगां ने सरीसी थारी धण चरचरी ओ राज

राज ढोला राखोनी मुखड़े रे मांय
परभाते सिधावजो आलीजा ओ राज रेवो नी आज रात ।

ताम्बूल की तरह तुम्हारी प्रेमिका रंग लाने वाली है । लवंग सी वह चरचरी है । हे प्यारे ! उसे अपने मुँह में स्थान दो । प्यारे प्रभात होते ही चले जाना आज रात को तो तुम यहीं पर रहो । प्रेमियों का संसार जन साधारण के संसार से अलग होता है उनकी अभिलाषायें, उनकी उपमायें उनकी कामनायें जन साधारण के संसार से परे की होती हैं ।

जलो म्हारी जोड रो उदियापुर माले रे
वीरो भोळो नणद रो म्हांरो हुक्म उठावे रे
म्हे थांने जलोजी, वरजियो उदियापुर मत जाय
उदियापुर रा कांमणी राखेला बिलमाय
जलो म्हारी जोडरो फोजां रो मांझीरे
वीरो म्हारी नणद रो म्हारों कियो न मानै रे
सांझ पड़ै दिन आथवै, रे छेला तेलण लावे तेल
कांई करूँ थांरे तेलने म्हारे आलीजे बिना किसो खेल
छैलो म्हारी जोड़ रो उदियापुर मालै रे
सांझ पडै दिन आथवै, जद खातण लावै खाट
कांई ऐ करूँ थारी खाट ने म्हारे मारूडे बिना किसो ठाट
छैलो म्हांरी जोड़ रो घर नहिं आयो रे
सांझ पडै दिन आथवै, छैला मालण लावे फूल
कांई करूँ ऐ मालण रा फूल ने हे म्हारी आलीजे है तो लागेआर

म्हारी जोड़ रो जलो उदियापुर मालै रे
सांझ पडै दिन आथवै रे तमोलण लावै पान
काई करूँ ऐ थारा पान ने हे म्हारे आलीजे बिना
किसी आण
जलो म्हारी जोड़ रो उदियापुर मालै रे
मसत महीनो आवियो रे जला अब तो खबर म्हांरी लेय
तो बिन घड़ियन आवडै रे छैला जीवन उतै इत देह
जलो म्हारो जोड़ रो सेजा रो सवादी रे
वीरो म्हारी नणद रा कह्यो न माने रे।

नारी जीवन प्रियतम के बिना शून्य है और उसके चले जाने के बाद एक सच्ची प्रेमिका के हृदय पर क्या बीतती है यह भुक्त-भोगी ही जानता है। शृंगार के सारे उपकरण उसे अच्छे नहीं लगते। प्रकृति स्वयं उसे डसने सी लगती है। एक नायिका का पति उदयपुर चला गया। उदयपुर पर प्रकृति देवी का वरद हस्त है। उसकी छटा अति मनोहर है। झीलों, तालाबों और पहाड़ियों से घिरे उस सुरम्य स्थान को देखते ही बनता है तभी तो एक कवि ने उदयपुर नगर की प्रशंसा में कहा था:—

उदयपुर शहर लंजा, माणस घण मोलाह।
पणहारियां पाणी भरे, रंग हो पीछोलाह॥

अर्थात् उदयपुर एक सुरम्य शहर है। वहां के रहने वालों का महत्व बहुत ऊँचा है। पीछोले के तीर पर पणिहारियें जब पानी भरती हैं

तो वह छटा तो देखते ही बनती है। प्रेमिका का प्रियतम उसी उदयपुर चला गया। वह कहती है—हे प्यारे ! मैंने तुम्हें उदयपुर जाने के हेतु मना किया था पर तुम हठीले ठहरे न माने और उदयपुर चले गए। तुमने उदयपुर में जाकर प्यारी को भुला दिया। उदयपुर की स्त्रियें बड़ी चतुर होती हैं तुम उनके फेर में आगए होंगे। प्रियतम ! यहां तुम्हारे विरह में सारे आनन्द फीके हैं। उदयपुर की कामनियों ने तुम्हें अपनी प्रेम लीला में फांस लिया। वीरों के वीर फौजों के नायक ! मेरी ननद के भाई तुम न माने और चले गए। सन्ध्या के समय तेलन तेल लाती है प्रकाश के हेतु, पर मेरे प्रकाश ! तुम तो उदयपुर बस रहे हो तुम्हारे बिना घर में अँधेरा है। तुम मेरी जोड़ी के छैल हो जो उदयपुर बैठे हो। मेरे घनश्याम ! तुम्हारे बिना जीवन शून्य है। कितना आदर्श प्रेम है। सन्ध्या के समय बढ़ैइन, मालिन और तमोलिन क्रमशः पलंग पुष्पहार और पान लाती हैं पर मेरे नाथ जब तुम घर पर नहीं हो तो इन सब का क्या मूल्य है ? प्यारे पावस ऋतु आगई पर तुम नही आये। मदमाता यौवन तुम्हें रह रह कर पुकार रहा है। तुम आओ।

राजस्थान में नृत्य के समय भी अपने प्रियतम की स्मृति के गीत गाती हैं। धारवा नृत्य जो राजस्थान में ढोल के ढमाके के साथ होता है के साथ जो भाव गीत में गाए जाते हैं। अति उत्तम हैं। प्रेमी गुजरात चला गया उसकी कोकिला महलों में अकेली उसकी याद में तड़प रही है। प्रेमी सावन का मेघ है तो प्यारी सावन की बीज। मेह बरसने लगा पर अपने प्रियतम के अभाव में बीज तड़प तड़प कर चमकने लगी। प्रेमी सरिता का जल है तो प्रेमिका मछली। उसके बिना मछली रूपी प्रेमिका का एक पल भी जीना दुश्वार

है। कामिनी कहती है—विरह की गर्मी से प्यारे पावस का जल सूख रहा है पर तुम नहीं आये। तुम यदि चम्पे के वृक्ष हो तो मैं चम्पे की डाल हूँ। प्रेमिका कहती है कि तुम हम डाल और वृक्ष से एक हैं। कभी भी अलग नहीं रह सकते। हम तुम एक हैं, शरीर दो हैं पर प्राण एक है।

उक्त अनुच्छेद का चित्र हमें निम्न धारवा नाम के लोकगीत में मिलता है

ढोलो गयो है गुजरात
मरवण महलां मांय एकली रे लाल
ढोलो सावणिये रों मेह
मरवण आभे केरी बीजळी रे लाल
वरसण लागो मेह
चमकण लागी बीजली रे लाल
ढोलो नदियां रो नीर
मरवण जल मांयली माछली रे लाल
सूखण लागो नीर
तड़पण लागी माछळी रे लाल
ढोलो चंपले रो पेड़
मरवण चम्पारी डाळियां रे लाल
ढोलो चंपा के रो फूल
मरवण फूलां मांयली पांखडी रे लाल

राजस्थान के लोक जीवन में एक से एक बढ़ कर विरह के गीत हैं प्रकृति और भावनाओं का अद्वैतवाद हमें उन गीतों में मिलता है।

सावण लागो पिया भादवोजी
कांई बरसण लागो, बरसण लागो जी मेह
होजी ढोला मेह
अब घर आयजा गौरी रा बालमा ओ जी
छपर पुराणा पिया पड गया रे
कोई तडकण लागा तिडक लागा चोदा बांस
होजी ढोला बांस
अब धर आयजा फूल गुलाब रा होजी
बादळ चमके पिया बीजळी रे
कोई महलां में डरपे महलां में डरपे घर री नार
होजी छोटी नार
अब घर आय जा बरसा ऋत भली होजी
ऐक तो अँधियारी ढाला ओरड़ी
दूजी हो अंधियारी दूजी हो अंधियारी रात
होजी ढोला रात
गोरी ऐ भींजे ढोला गोखड़े जी
कांई आलीजो भीजैं आलीजो भीजै फौजों मांय
हांजी ढोला मांय
अब घर आयजा बरसालू वादळा ओ जी

घोडो तो भीजै पिया नवलखो रे
कांई भीजै बनाती साज बनाती साज
ओजी ढोला साज
अब घर आयजा गोरी रा बालमा होजी
कूवो तो हुवे तो ढोला डाकलूं जी
कोई समदर डाक्यो डाक्यो ना जाय
होजी ढोला न जाय
अब घर आयजा फूल गुलाब रा होजी
कागद हुवे तो ढोला वांचलूं जी
करम न करम न वांच्यो जाय
हांजी ढोला जाय
अब घर आयजा आसा थारी लगी रही जी
टाबर हुवै तो पिया राख लूं जी
ए जोबन राख्यो न जाय ?
हांजी ढोला न जाय
अब सुध लीजो गोरी रा साहिबा ओ जी
चवदे वरस री पिया परणिया जी
कोई हो गई हो गई जोध जवान
होजी ढोला जोध जवान
अब घर आवो गोरी रा बालमा होजी
नेडी नेडी करो पिया चाकरी जी

छैला सांझ पड्यां घर सांझ पड्या घर आव
होजी ढोला आव
अब घर आयजा वरखा ऋतु भली होजी
थांने ने प्यारी पिया परदेसां री चाकरी जी
म्हां ने प्यारा प्यारा लागो आप
होजी ढोला आप
अब घर आय मिरगा नेणी रा बालमा ओ जी
दोरी दिखण री ढोला चाकरी रे
दोरो हैं नरमदा रो नरमदा रो घाट
होजी ढोला घाट
घर आय गोरी रा साहिबा ओजी
अंग नहीं मावै पिया कांचळी जी
हिवडै नी मावै मावै हार
होजी ढोलां हार
अबे घर आयजा गोरी रा बालमा ओ जी
आवण आवण के गया जी
कर गया कवल कवल अनेक
होजी ढोला कवल अनेक
अब घर आयजा वरसा ऋतु भली होजी
दिनडा तो गिण गिण पिया घिस गई जी
कोई म्हांरी आंगलिया आंगलियां री रेख

होजी ढोला रेख
अब घर आयजा गोरी रा बालमा ओ जी
तारां तो छायी पिया रातड़ी जी
ढोला फूलडां छायी फूलडां छायी सेज
होजी ढोला सेज
अब घर आयजा गोरी रा बालमा होजी
विरछां विलूंमी पिया वेलड़ी
नरां विलूंबी विलूंबी नार
होजी ढोला नार
अब घर आयजा फूल गुलाब रा होजी
हूँ तो मरूँ हूँ पिया एकली जी
हूँ मरूँ हूं मरूँ कटारी खाय
अब घर आयजा वरसा ऋतु भली हो जी।

राजस्थान के उक्त लोकगीत में जिन मधुर भावनाओं का समावेश हुआ है वे अपने प्रकार के एक ही हैं। विरह व्यथित सरल एवं कोमल नारी हृदय अपने प्रियतम की याद में बावरा सा दृष्टिगत होता है। पंक्तियों को जब संगीत की स्वर लहरी में गाया जाता है तो हृदय आनन्द विमोर हो जाता है। उसमें नारी का अपने प्रीतम के प्रति सात्विक प्रेम बोलता है। सरलार्थ की दृष्टि से पंक्तियों का अर्थ अति सरल होते हुए भी बड़ा गहरा है।

अपनी प्रेयसी को छोड़ कर एक प्रेमी नर्मदा के किनारे नौकरी करने चला गया। वर्ष पर वर्ष बीत गए प्रेमी का कोई संदेशा नहीं आया। विरह

की उन घड़ियों में उठे हुए नायिका के हृदय के भावों का उन पंक्तियों में सग्रह है। प्यारी के बल्लभ! सावण भादों की झड़ी है आज मदमाता यौवन तुम्हारी स्मृति में बिलख रहा है। तुम मुझे अकेली जिस कुटिया में छोड़ गए थे उसका छप्पर टूट गया है बांस भी तो टूटे जा रहे हैं। मेरे प्यारे गुलाब के सम सुहावने प्रियवर, तुम्हारी प्यारी तुम्हारी बाट जोह रही है तुम घर क्यों नहीं आते? मेरे घर के दीपक! आज तुम्हारे बिना घर में अँधेरा है। भादों की इस घोर अँधेरी रात ने उस अँधेरे को चौगुना कर दिया है। प्राणनाथ! तुम्हारी आशा लगाए बैठी हूँ तुम घर आ जाओ। प्रियवर! तुम फौजों के बेड़े में भींज रहे हो और मैं यहाँ पर आँसुओं की वर्षा एवं मेघ की वर्षा दोनों में भीग रही हूँ। बरसाती बादल के समान स्नेह सींचने वाले मेरे मन के बादल! तुम घर को क्यों नहीं आते। तुम्हारा नवलखा घोड़ा और नवीन साज भींजता होगा मेरे हृदयेश्वर तुम घर आ जाओ तुम्हारा विरह सहा नहीं जाता। इस विरह रूपी समुद्र को कैसे पार करूँ? कुँआ हो तो फांद कर तुम्हारे पास आ जाऊँ पर नाथ! यह कैसे हो सकता है कि मैं विशाल समुद्र को फांद कर तुम्हारे पास आ सकूं? हतभाग्य हैं मेरे! पत्र होता—तो पढ़ लेती पर प्राण प्यारे भाग्य का कैसे पढ़ूँ? चौदह वर्ष की आयु में तुम्हारा हमारा विवाह हुआ था उस समय में छोटी थी पर अब पूर्ण युवा हो गई हूँ। मेरे यौवन के अधिकारी! क्या तुम नहीं आओगे? मदमाते यौवन को मैं अब अपने वश में कैसे करूँ? यह बच्चा तो है नहीं जिसे फुसलाया जा सके। मेरे प्यारे! यह सब समझ कर अपनी प्रियतमा के सूने संसार में आ जाओ। प्रेम की बस्ती उजड़ रही है। तुम्हारे विरह की घड़ियों में मुझे शृंगार नहीं सुहाता तुम नहीं आते हो क्या नायिका से रूठे

हो ? सावन में दर्शन देने का तुम्हारा कौल था पर निर्मम ! तुम अभी तक नहीं आए क्या बात है। प्रतीक्षा में तुम्हारे आने की अवधि गिनते गिनते मेरी अँगुलियों की रेखायें घिस गई हैं। मेरे गुलाब के फूल ! अब तो प्रियतमा के हृदय की संज्ञा समझ कर घर आ जाओ। उस प्राकृति दृश्य को देखो बेलें वृक्षों से लिपट रही हैं। इस सुरम्य वेला में क्या तुम्हें मेरी याद नहीं आती। यह समय आमोद प्रमोद का है। स्त्रियें पुरुषों को आलिंगन दे रही हैं पर मेरे हृदय देवता ! तुम्हारी प्यारी आज अकेली विरह की आग में झुलस रही है। तारों से रात आच्छादित है, तुम्हारे सोने के हेतु मैंने सुन्दर सेज बिछाई है क्या तुम न आओगे ? मेरे प्रियतम इस एकाकीपन में कटारी खाकर मर जाने को मेरा जी करता है। नायिका की उक्त तड़पन से जो भाव हमें लोकगीत में चित्रित हुए दिखते हैं वे बहुत सुन्दर हैं।

राजस्थान के लोक साहित्य में सूर के भ्रमर गीतों की तरह गोपिकाओं के विरह गीत भी पढ़ने को मिलते हैं पर उनकी खास एक विशेषता यह है कि राम और कृष्ण एक ही रूप में दृष्टिगत होते हैं। उन विरहणियों की यह विशाल हृदयता अति अभिनन्दनीय है:—

ब्रज सूनी ऐ सहेल्यां एक राम बिना ब्रज सूनी ऐ
राम बिना ब्रज ऐसी सूनी लागै
डार सूनी ज्यों ऐक मिरग बिना
ब्रज सूनी ऐ सहेल्यां एक राम बिना ब्रज सूनी ऐ
राम बिना ब्रज ऐसी सूनी लागे ऐ
सरवर सूनू ज्यों ऐक नीर बिना

ब्रज सूनी ऐ सहेल्यां एक राम बिना ब्रज सूनी
राम बिना ब्रज ऐसो सूनी लागे ऐ
रात सूनी ज्यूं ऐक चाँद बिना
ब्रज सूनी ऐ सहेल्यां एक राम बिना ब्रज सूनी ऐ
राम बिना ब्रज ऐसी सूनी लागे ऐ
बांबी सूनी ज्यों ऐक वासग बिना
ब्रज सूनी ऐ सहेल्यां एक राम बिना ब्रज सूनी ऐ
राम बिना ब्रज ऐसी सूनी लगे ऐ
घटा सूनी ज्यों एक बीज बिना
ब्रज सूनी ऐ सहेल्यां ऐक राम बिना ब्रज सूनी ऐ

लोकगीतकारों ने राम और कृष्ण का भेद नहीं माना वे सभी संसार को राम कृष्ण मय देखती हैं। पंक्तियों का अर्थ है हे सखियों! कुंज बिहारी प्यारे घनश्याम के बिना सारा ब्रज सूना है जिस प्रकार मृगियों का झुण्ड मृग बिना, रजनी निशीनाथ बिना, वन मयूर बिना, बांबी सांप बिना एवं घन घोर घटायें बिजली के बिना।

राजस्थान के साहित्य में शृङ्गार के विभिन्न वर्णन भरे पड़े हैं, आदर्श प्रेम की व्याख्या आप निम्न दोहे में पढ़िए :—

सूखा हुआ अंबूआ ज्यांरी वासा गई वलेह
कोयळड़ा टहूका देह आगळूंणे गुणेह

एक आम का वृक्ष सूख गया था और अवशेष मात्र ठूण्ठ रह गया था उस पर कोयल बैठी हुई थी राहगीर अपने साथी राहगीर से पूछता है-—

साथी ! आम का वृक्ष सूख कर ठूण्ठ हो गया है न उस पर आम है न छाया के हेतु पत्ते । कोयल पागल तो नहीं है । इस पर दूसरा कहता है— साथी ! यह कोयल सच्ची प्रेमिका है । सच्चे प्रेमी कभी प्रेम के प्रति गद्दारी नहीं करते । इस आम पर उसने जीवन की कितनी ही बसंत बिताई हैं । अब उसके अवशेष पर बैठी उन यौवन के मदमाते दिनों की याद कर टहूक रही है । कितना हृदय स्पर्शी भाव है ।

प्रभु घनश्याम के विरह में एक गीत और स्मरण हो आया । भक्त ने कितनी कितनी श्रद्धा से उसका स्मरण किया है ।

घनश्याम नहीं अरमाण नया
चिर परिचित म्हारे हिवड़े रा
आज फफोला बण फूट्या
गीतड़ला नटवर दुखड़ेरा

हूँ मरघट रा पीपल तरू सो
उत्कंठा रा होग्या ख्याला
होटां सूं भी न लगा पायो
वे चूर मधु रा प्याला

कुण जाणी ही इण जीवण में
सूखो सावणियो आवेलो
स्वांति बूंद पड़तां पैली
पपहियो यूं मर जावेलो

चांदा रे उगतां रै पैली
काली बादलियो है छायो
घनश्याम तिहारा चरणां में
हिवड़ा री होली ले आयो

प्रकृति भक्ति और विरह की त्रिवेणी कवि की उक्त भावनाओं में है।

पड़े ढाढड़ली जोरावर ओ राज
मरे रे वन रा मोरिया।
पड़ोसण रो पीयो घरे आवियो
मद री लेवे मनवार।
ऐ जी पधारो नी म्हारा भरतार
मेल सूनो ऊमणो॥

वर्षा की तरह शरद ऋतु में भी नायिका अपने प्रियतम को याद करती है। हर ऋतु की अपनी अपनी खासियत अलग अलग होती है। नायिका कहती है—हे प्रियतम! ठण्ड जोर से पड़ रही है। वन के मोर मर रहे हैं। पड़ोसन का पति घर आ गया है और दोनों प्रेमी बड़े प्रेम से रंग महल में शराब पी रहे हैं।

संधाणो लाडूड़ा बांधिया ओ राज
किस मिस घाल बदाम
जीमण ने केसरिया बालम जी ओ
सियाले घरे पधार
ऐ जी पधारो नी म्हारा भरतार
मेल सूनो ऊमणो॥

हे प्रियतम ! तुम्हारे हेतु किस मिस और बादाम डाल कर लड्डू तैयार किए हैं तुम उन्हें जीमने के हेतु मेरे प्रियवर घर आवो। आज तुम्हारे विरह में मेरे साथ यह पाषाणों का बना हुआ महल उदास है।

बिलखा गोरी रा गोखड़ा
फबके ओलू कर सेज
पधारो गोरी रा घनश्याम
रेण सूनी लागे सा
लागे मेल सूनो ऊमणो

जिन झरोखों पर हम तुम बैठ कर मीठी मीठी बातें करते थे आज बिलखते से दृष्टिगत होते हैं। प्रियवर मेरे साथ यह सेज भी तुम्हारे विरह में रोती सी दृष्टिगत होती है। हे गोरी सुन्दरी के श्याम ! अब तो सर्दी पड़ रही है तुम घर पर पधारो।

राजस्थानी लोक गीतों में, उसके दोहों, छंदों और सवैयों में प्रकृति वर्णन बहुत सुन्दर चित्रित हुआ है। वहां के नायक नायिकों ने प्रकृति में अपनी वेदना हर्ष बिछोह एवं मिलन का प्रतिबिम्ब देखा है। हिन्दी का आज का छायावाद राजस्थान के लोकगीतों में पहले से भरा पड़ा है। विशुद्ध प्रेम से सने ये शृङ्गार रस के विरह गीत किस पाठक को अपने साथ बहा नहीं ले जाते। इस प्रकार के सैंकड़ों गीत राजस्थान के लोक जीवन में गाए जाते हैं। स्वतंत्र भारत की राष्ट्र भाषा हिन्दी में राजस्थान के साहित्य का अपना अनूठा और महत्व पूर्ण स्थान है उसे बञ्जर कह कर टाला नहीं जा सकता। राजस्थान

के लोक जीवन में इतना महत्त्व पूर्ण शृङ्गार साहित्य भी है जिस पर एक विशाल ग्रन्थ लिखा जा सकता है।

बादली के लेखक श्री चन्द्रसिंह के निम्न गीत में कितना सुन्दर प्रकृति वर्णन निखर पड़ा है।

छिण छिण सोहै छांटडल्यां री छोल
सूरज किरणां सरसर उतरे
ंग अंग सुवरण झोल
पानां पानां पल पल थिरकै
कर कर खूब किलोल
घर रा सूखा कण कण मेलै
नेणां में रस घोल
भूरा भूरा भाखर भूलैं
टीबड़ियां सूं रोल
तालरियां में तड़ तड़ बोले
छीलरियां रमझोल
छातां ऊपर छम छम नाचै
परनालां सूबबोल
खालां रो खाल खल में खेले
पोखर पोला पोल
नालां री चुलबुल में न्हावै
पालां स पग खोल

जड़ जगती नै चेत करावै
चेतन चित हिलोल
छिण छिण सौहै छांटडल्यांरी छोल

रिमझिम बरसती वर्षा की बूंदों का सजीव वर्णन कितना हृदयमोहक बन पड़ता है। सीधे सादे नित्य राजस्थानी जीवन में काम आने वाले शब्दों का समावेश उक्त गीत में हमें मिलता है। प्रकृति की सुरम्यता शृङ्गार कर सामने उपस्थित सी जान पड़ती है। डिंगल साहित्य ऐसे कई एक उदाहरणों से भरा पड़ा है।

वर्षा के दोहे पाठकों के पठनार्थ और कुछ लिख रहा हूँ उससे यदि डिंगल साहित्यकारों के प्रकृति प्रेम का उन्हें परिचय मिला तो मुझे असीम हर्ष होगा।

(१)

धर नीला धण पंडुरी
धरि गह गहई गमार
मारू देस सुहामणउ
सांवणि सांझी वार

(२)

डूंगरिया हरिया हुआ
वणे झिंझोरिया मोर

इणि रिति तीनइ नीसरइ
जाचक चाकर चोर

(३)

फौज घटा खग दामणी
बूंद लगई सर जेम
पावस पिउ विण वल्लहा
कहि जीवीजई केम

(४)

मेहां वूठां अन वहल
थल ताढा जल रेस
करसण पाका किण खिरा
तद कउ वलण कलेस

(५)

हेली सिलगै मो हियो
रह्यो तडफि दिन रात
बालम छयो विदेश में
जो दुख सह्यो न जात

(६)

ऊँचो अंब सोभा अधिक
रेशम री तणियांह

झोटा दे दे झूलवै
त्यां चढि तीजणियांह

(७)

प्रीतम कामणगारियां
थल थल वादलियांह
घण बरसंतइ सूकिया
जल सूं पांगरियाह

वियोग के वे क्षण जब कि बेटी घर से बिदा होती है उस समय विरह व्यथित आत्मीयजनों की आँखों में आँसुओं की बरसात उमड़ पड़ती है। मां की ममता, भाई का प्यार पिता का वात्सल्य और सहेलियों का साथ ये सभी कुछ छोड़कर जाने की करुण घड़ियों में गद्गद भावुकता भरे जो गीत राजस्थानी जीवन गाता है उसे सुन कर श्रोता की आँखों से करुणा स्वयं करुण बन द्रवित हो बहने लगती है। शकुन्तला के आश्रम से विदा होने पर जो दृश्य तपोवन में उपस्थित हो गया था, प्रकृति जिस प्रकार शकुन्तला को विदा होते देख मुर्झासी गयी थी वही इन गीतों के गाने पर हमारे सामने आजाता है। राजस्थानी जन जीवन की ये भावनायें राजस्थान की शुष्क प्रकृति में पल कर भी इतनी सरस है कि विशेष कहा नहीं जा सकता —दो तीन गीत प्रस्तुत हैं:-

म्हें थांने पूछा म्हांरी धीवड़ी,
म्हें थांने पूछां म्हांरी बालकी,
इतरो बाबेजी रो लाड, छोड़ र बाई सिध चाल्या ?

म्हैं रमती बोबोसा री पोळ,
म्हें रमती बाबोसा री पोळ
आयो सगेजी रो सूवटो, गायडमल ले चाल्यो।
म्हें थांने पूछां म्हांरा बालकी
म्हें थांने पूछां म्हांरी धीवडी
इतरो माऊजी रो लाड छोड'र बाई सिध चाल्या ?
आयो सगेजी रो सूवटो
हे आयो सगेजी रो सूवटो
ओ लेग्यो टोली में सूं टाल, फूटरमल ले चाल्यो।
म्हें थांने पूछां म्हांरी बहनड़ी
म्हें थांने पूछां म्हांरा बाईसा
इतरो बीरेजी रो हेत, छोड'र बाई सिध चाल्या ?
हे आयो परदेसी सूवटो
म्हें रमती सहेल्यां रै साथ, जोडी रो जालम ले चाल्यो।

गीत नं० २

ऐकरिये करला थांरा, मारूजी, पाछा जी मोड़,
राजींदा ढोला, ओलू घणी आवै म्हारा बाबोसा रो।
सुन्दर गोरी, ओलूं थारी परो रै निवार,
चंपक—वरणी, बोबोसा री ओलूं सुसरोजी भांगसी।
ऐकरिये, ओ मारूजी, करला पाछा जी मोड़,
राजींदा ढोला, ओलूं घणी आवै म्हारी माय री।

सुन्दर गोरी, ओलूं थारी परी रै निवार,
मिरगानैणी, माऊजी री ओलूं सासूजी भांगसी ।
ऐकरिये, ओ मारूजी, करला पाछा जी मोड़,
राजींदा ढोला, ओलूं घणा आवें म्हारे वीर री ।
सुन्दर घण ओलूं थारी परा रै निवार,
चंपक वरणी वीरैंजी री ओलूं देवर भांगसा ।
ऐकरिये, ओ मारूजी, करला पाछा जी मोड़,
राजींदा ढोला, ओलूं घणी आवै म्हारी छोटी बैन री ।
सुन्दर घण, ओलूं थारी परी रै निवार,
मिरगानैणी, बैनड़ो रो ओलूं नणदल भांगसी ।

भला कौन है जो इन गीतों को सुन कर द्रवित न हुआ हो । कहना यह होगा कि वात्सल्य माकार हो उठता है ।

अपनों की याद भुलाये नहीं भूलती हालां कि संसार जानता है, ससार असार है । एक दिन समय चक्र के फेर में सब कुछ मिट जाने को है । वह अपनी स्मृति को चिर अमरता प्रदान करने के हेतु प्रत्यत्त वा अप्रत्यत्त रूप से प्रयत्न करता है । मानव की यह अपनी नैसर्गिक कमजोरी है । मुगल सम्राट शाहजहां ने अपनी प्रेयसी मुमताज की स्मृति में ताज का निर्माण किया । युग बीत गए पर ताज अभी खड़ा है । पर कब तक ? इसका उत्तर ताज के पाषाणों के पास नहीं । पर जा लोग अपने को जन जीवन के लिए मिटा देते हैं उनके संस्मरण किसी व्यक्ति विशेष के लिए वेदना मय नहीं । उसकी स्मृति मात्र

किसी वर्ग को नहीं रुलाती पर उन जनप्रिय नायकों की पुण्य समाधियें देव मन्दिर बन जाते हैं। वह व्यथा जन साधारण की व्यथा बन कर सारे समाज में व्याप्त हो जाती है। उनकी याद में गाए जाने वाले गीतों में चिरन्तन नैतिक आकर्षण रहता है। जब जब वह स्वर लहरी सुनाई पड़ती है उसकी याद में श्रोता की आंखों में आंसू न सही उदासी अवश्य छा जाती है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देने वाले राणा रतन का एक स्मृति गीत प्रस्तुत है।

म्हारा रतन राणा, एकर तो अमराणे घोड़ो फेर।
अमराणे में बोलै सूवा—मोर,
होजी हो, म्हारा रतन राणा,
अमराणे में बोलै सूवा—मोर,
बागां में बोलै छै काली कोयली,
रै म्हारा सायर सोंढा, एकर सूं अमराणे घोड़ो फेर।
अमराणे में महूड़े रो पेड़,
हो जी हो, म्हारा रतन राणा, अमराणे में महूड़े रो पेड़।
महूड़ां मांही सू मद नीसरै,
हो म्हारा, रतन राणा, एकर सूं अमराणे पाछो आव।
अमराणे में घरट मंड़ाय,
हो जी हो, म्हारा रतन राणा, घर घरिये में घरट मंड़ाय
गेहूँड़ा पीसीजै, आटड्यो राणे रावरो,
रै म्हारा सायर सोढा, एकर जो अमराणे घोड़ो फेर।

अमराणे में घड़ै रै सोनार
हो जी हो, म्हारा रतन राणा, अमराणे में घड़ै रै सोनार।
पायलड़ी घड़ा दे रिम झिम बाजणी,
रै म्हारा रतन राणा, एकरिये अमराणे पाछो, आव।
भटियल ऊभी, जाजइये री छांह,
हो जी हो, म्हारा रतन राणा, भटियल ऊभी, छाइये री छांह।
आँसूड़ा ढलकावै कायर मोर ज्यूं,
अमराणे में घोर अंधार,
हां रै म्हारा साढा राणा, अमराणे में घोर अंधार।
बिलखानै लागै महल—मालिया,
हो म्हारा रतन राणा, एकरिये अमराणे पाछो आव।

ढोला मारू के विषय में प्रकृति विषयक प्रसंग पर प्रारम्भ में कुछ कहा गया है। इसी प्रेम आख्यान में विरह वर्णन का जो रूप हमारे सामने आता है वह निसन्देह उत्तम बन पड़ा है। प्रिय विरह में व्यथित मारवणी का हृदय मचल रहा है। उस प्रेम की एक निष्ठता एवं उदात्त भावना का दर्शन है।

ढोला हूँ तुझ बाहिरी, झीलण गइय तलाइ।
ऊजल काळा नाग जिऊं, लहिरी ले ले खाइ॥
सुन्दर सोलै सिंगार सजि, गई सरोवर पाल।
चंद मुलक्कयउ, जळ हंस्यउ, जळहर कंपी पाळ॥

चंदा तो किण खंडियउ, मो खडी किरतार ।
पूनिम पूरउ ऊगसी, आवंतइ अवतार ॥
चंपा—केरी पांखड़ी, गूंथूँ नवसर हार ।
जउ गळ पहरूँ पीव बिन; तउ लागे अंगार ॥

और इसी प्रेम आख्यान में मारू का स्वप्न में पति दर्शन और विरहाकुलता का नमूना इस प्रकार है:—

जिम जिम मन अमले किअइ, तार चढता जाइ ।
तिम तिम मारवणी तणइ, तन तरणापउ थाइ ॥ १ ॥
हंस चलण, कदलीह जंघ, कटि केहर जिम खीण ।
मुख सिसहर खंजर नयण, कुच श्रीफल, कंठ वीण ॥ २ ॥
असइ आरखइ मारूवी सूती सेज बिछाइ ।
साल्ह कुंवर सुपनइ मिल्यउ, जागि निसासउ खाइ ॥ ३ ॥
उलंबे सिर हथ्थड़ा चांहंदी रस लुब्ध ।
विरह महाधण ऊभट्यउ, थाह निहालइ मुध्य ॥ ४ ॥
उक्कंबी सिर हथ्थड़ा, चाहंती रस लुध्ध ।
ऊंची चढ़ि चातृंगि जिऊं, मागि निहालइ मुध्ध ॥ ५ ॥
थाह निहालह, दिन गिणइ, मारू आसा लुध्ध ।
परदेसे धांधल घणा, विखउ न जाणइ मुध्य ॥ ६ ॥
ऊनमियऊ उत्तर दिसइं, गाज्यउ गुहिर गंभीर ।
मारवणी प्रिउ संमर—यउ, नयणे वूठउ नीर* ॥ ७ ॥

---

* ढोला मारू रा दूहा से ।

मारूनूं आखइ सखी, आज स कांइ उदास ।
कांम-चित्रांम जु दिट्ठ मइं, रूप न भूलइ तास ॥ ८ ॥
अम्हां मन अचरिज भयउ, सखियां आखइ एम ।
तहं अणदिट्ठा मज्जणां, किऊं करि लग्गा पेम ॥ ९ ॥
जे जीवण तिन्हां तणां, तन ही मांहि बसंत ।
धारइ दूध पयोहो, बालक किम काढंत ॥ १० ॥
ससनेही समदां परइ, बसंत हिया मंझार ।
कुसनेही घर आंगणई, जांण समंदां पार ॥ ११ ॥
सखिए हज्जण बल्लहा, जइ अण दिट्ठा तोय ।
खिण खिण अंतर संभरइ, नहीं विसारइ सोइ ॥ १२ ॥
मारूनूं आखइ सखी, सह हमारी बुझ्झ ।
साल्ह कुंवर सुहिणइ मिल्यउ, सुन्दरि सउ वर तुज्झ ॥ १३ ॥
सखी—वयण सुन्दरि सुण्या, उठी मदन की झाल ।
सुन्दरिनूं सज्जण विरह, उपन्नउ तत्काल ॥ १४ ॥
हें सखिए, परदेस प्री, तनह न जावइ ताप ।
बाबहियउ आसाढ जिम, विरहणि करइ विलाप ॥ १५ ॥
बाबहियउ नइ विरहणी, दुहुवां एक सहाव ।
जब ही बरसइ घण घणउ, तबही कहइ प्रियाव ॥ १६ ॥
बाबहिया, चढि गउखसिरि, चढि ऊचहरी भीत ।
मन ही साहिब बाहुडइ, कउ गुण आवइ चीत ॥ ७ ॥
बाबहिया, चढि डूगरे, चढि ऊंचहरी पाज ।
मन ही साहिब बाहुडइ, सुणि मेहांरी गाज ॥ ८ ॥

बाबहिया, तूं चोर, थारी चांच कटाविसूं ।
राति ज दीन्ही लोर, मइं जाण्यउ प्री आवियउ ॥१९॥

दूहा

बाबहिया निल पंखिया, मगरि ज कालो रेह ।
मति पावस सुणि विरहणी, तलफि तलफि जिउ देह ॥ २० ॥

बाबहिया रत पंखिया, तइं किऊं दीन्हो लोर ।
मइं जाण्यउ प्रिउ आवियउ ससहर चंद चकोर ॥२१॥*
बाबहिया निल पंखिया, बाढत दइ दइ लूण ।
प्रिउ मेरा मइं प्रीउकी, तूं प्रिउ कहइ स कूण ॥२२॥
बाबहिया रत पंखिया, बोलह मधुरी वांणि ।
काइ लवंतउ माठि कर, परदेसी प्रिउ आंणि ॥२३॥
बाबहिया, प्रिउ प्रिउ न कहि, प्रिउ को नाम न लेह ।
काइक जागइ विरहणी, प्रीउ कह्यां जिउ देह ॥२३॥
बाबहिया डूगर दहण, छांडि हमारउ गांम ।
सारी रात पुकारियउ, लइ लइ प्रिउकउ नांम ॥२५॥
चहुं दिस दामिनी सघन घन, पीउ तजी तिण र ।
मारू मर चातग भए, पिउ पिउ करत पुकार ॥२६॥
पावस आयउ साहिबा, बोलर लागा मोर ।
कंता, तूं घरि आव नवि, जोबन कीधउ जोर ॥२७॥

---

* ढोला मारू रा दूहा ।

गिरिवर मोर गहक्किया, तरवर मंक्या पात ।
धणियां धण सालण लगा, बूठै तो बरसात ॥२८॥

राजा, परजा, गुणिय-जण, कवि जण, पंडित, पात ।
सगलां मन उछव हुअउ, बूठै तो बरसात ॥२९॥

ऊनमि आई बदली, ढालउ आयउ चित्त ।
यो बरसइ रितु आपणी, नइण हमारे नित्त ॥३०॥

ऊनमियउ उत्तर दिसइं, मेडो ऊपर मेह ।
ते विरहिणि किम जीवसे. ज्यांरा दूर सनेह ॥३१॥

उनमियउ उत्तर दिहइ, काळी कंठलि मेह ।
हूँ भींजू घर—आंगणइ, पिउ भीजइ परदेह ॥३२॥

बाजुलियां चहला वहलि, आभइ आभइ एक ।
कदी मिलूं उण साहिबा, कर काजल की रेख ॥३३॥

बीजुलियां चहला वहलि, आभइ आभइ च्यारि ।
कद रे मिलउंली सज्जना लांबी बांह पसारि ॥३४॥

बीजुलियां चहला वहलि, आभय आभय कोडि ।
कद रे मिलउली सज्जना, कच कंचूकी छोडि ॥३५॥

गिरह पखालण, सर भरण, नदी हिंडोलणहारि ।
सूती सेजईं एकली, हइ हइ दइव म मारि ॥३६॥

दादुर-मोर टबक्क घण, बीजलड़ी तरवारि ।
सूती सेजइं एकली, हइ हइ दइव म मारि ॥३७॥

जल थल, थल जल रह्यउ, बोलइ मोर किंगार।
स्रावण द्भर हे सखी, किहां मुझ प्राण अधार ॥३८॥

ढोला और मारवणी का प्रेमाख्यान राजस्थान के आदिवासी लोक साहित्य में भी घुल गया है। मेवाड़ के भीली क्षेत्र में गाये जाने वाले लोक गीतों में ढोला मारवणी के सम्बन्ध में जो लोक गीत गाये जाते हैं वह इस प्रकार हैं। इस प्रकार के कई एक लोक गीत राजस्थान के लोक साहित्य में कई स्थलों पर मिलेंगे।

ढोलाजी नानोरा परणाविया	ढोला सूनेड़ी
ढोलाजी तल जतरा ढालोजी	”
ढोलाजी मूङ्ग जतरी मारूणी	”
पिंगलगढ़ परणाविया	”
नरवलगढ़ थारू राज	”
ढोलाजी रे परणी पीयर मेली	”
ढोलाजी रे थालियां मांये परणाविया	”
ढोलाजी रे भर जोवनियां मांय	”
ढोलाजी रे कागदियां नो टोटो	”
ढोलाजी रे मूं मारूणी भर जोवनियां मांई	”
ढोलाजी रे आणे वेला आवजो	”
ढोलाजी रे जोड़ी रे जोड़ीना	”
ढोलाजी रे असवारी ना ऊंटिया	”
ढोलांजी रे वेलुरां रे आवजो	”

ढोलाजी रे ऊंटिड़ा मंगाड़े रे ढोला सूनेड़ी
ढोलाजी रे राहे् का तेड़ावे ''
ढोलाजी रे सपड़ासी मोकलावो ''
ढोलाजी रे देशां ने परदेशां ''
ढोलाजी रे राहे्का हांड़ा जोतो फरे ''
ढोलाजी रे सपडासो धामा दौड़े ''
यो सपडासी आवे धामा दौड़े ''
ढोलाजी रे राहे्का धामा दौड़े ''
ढोलाजी ऊंटिज्या लेई ने आवे ''
ढोलाजी रे आगियां ठेठा ठेठ ''
ढोलाजी रे आंगणा बांधे ''
ढोलाजी रे सोवे ह्रीखा ''
ढोलाजी रे नहीं रे घडी री जेज ''
ढोलाजी रे पीली रे परभातां ''
ढोलाजी रे ऊंटिया बोलावो ''
ढोलाजीं रे काठियां मंडावो ''
ढोलाजी रे होई ने हरीखा ''
ढोलाजी रे आणू लेवा जाए ''
ढोलाजी रे पिंगलगढ रा राजे ''
ढोलाजी रे बाग ढीली सोडो ''
ढोलाजी रे पास काठी बांधो ''
ढोलाजा रे तोखा रालो ताजणां ''

ढोलाजी रे जांईरे लांबा मारगां ढोला सूनेड़ा
ढोलाजी रे दनरा डावां डूंगरा ”
ढोलाजी रे सोवा सोवन मलिया ”
ढोलाजी रे पिंगलगढ तो सेटी है ”
ढोलाजी रे दन नो जातो रेग्यो ”
ढोलाजी रे ताते नोचा उतरो ”
ढोलाजी रे पग में खोला काडो ”
ढोलाजी रे बीजू हारना खीला ”
ढोलाजी रे काटा भीडो ओडा ”
ढोलाजी रे ढीलो मेलो नकेलां ”
ढोलाजी रे तीखा रालो ताजणां ”
ढोलाजी रे दनडो सतां मेलू ”
ढोलाजी रे ऊंटड्यां धामा दौडे ”
ढोलाजी रे गीया ठेठा ठेठ ”
ढोलाजी रे क्यां डेरा दियो ”
ढोलाजी रे बागां री बाखड़ियां ”
ढोलाजी रे मेलां मालम करावो ”
ढोलाजी रे ढोला आणे आयो ”
ढोलाजी रे कोरा ने कागदियां लखो ”
ढोलाजी रे चीठी मेला मोकलो ”
ढोलाजी रे मेला चीठी गई रे ”

ढोलाजी रे हारो मलवा आवे ढोला सूनेड़ी
ढालाजी रे रामा कसनी करे ”
ढोलाजी रे जोजाजी हांमलो मारी बातां ”
ढोलाजा रे कसूंबा हांमलो मारी बातां ”
ढोलाजी रे जीजाजी कसूंबो वपरावो ”
ढोलाजी रे ऊंटे कवड़ा लीमड़ा नाको ”
ढोलाजी रे हांमलो मारी बातां ”
ढोलाजी रे ऊंटियां नहीं खावे कवड़ा लामड़ा ”
ढोलाजी रे लावो नागर वेल ”
जीजाजी रे हांमलो मारा बातां ”
जीजाजी रे हकार आपां जां ”
रे हालाजी क्यां हकार आवे ”
जीजाजी नार ते मानवी मारे ”
रे हालाजी मू एकलो हकार जाऊ ”
रे हालाजी क्या नार आवे ”
रे जीजाजी गोयरां वाली सोकी नार आवे ”
रे ढोलाजी बिहुलाने हिड्यां ”
रे ढोलाजो सोकी माथे आया ”
रे ढोलाजी ओदी बैठा ”
रे ढोलाजी डनड़ो डूबी गियो ”
रे ढोलाजी आधी ने मजरातां ”

रे ढालाजी नार ते बोलतो आयो ढोला सूनेड़ी
रे ढोलाजी ढीली गोलो थाई रे ,,
रे ढोलाजी नार मरि गियो ,,
रे ढोलाजी साकर खबर आली ,,
रे ढोलाजी मारूणी नहीं जाणी ,,
रे ढोलाजी मारूणी खबर लागी ,,
रे ढोलाजी अडेडो नोकरी गिया ,,
रे बाईजी रे आवे जीवा पाछा नहीं ,,
रे बाईजी रे धणां आगतां थाई गियां ,,
रे बाईजी रे भोजनियां तोयार करो ,,
रे बाईजी थोलियां भोजन गालो ,,
रे बांईजी पेटियां ने खोलो ,,
रे बाईजी गेणूला ने पेरो ,,
रे बाईजी रे पाका पाका मसरू ,,
रे बाईजी पाका मसरू पेरो ,,
रे बाईजी रे वेहला हिंडिया ,,
रे बाईजी रे आधी ने मजरातां ,,
रे बाईजी रे जाए रे धामा दौडे ,,
रे बाईजी रे गिया ठेठा ठेठ ,,
रे बाईजी रे गोयरांवाली सोकी ,,
ढोलाजी रे आवतडी ने देखी ,,

ढोलांजी रे डाकण है के जोगण ढोला सूनेड़ी
ढोलाजी रे श्रणियें तो बतलाश्रो ,,
ढोलाजी रे कूंण आवी रेयूं रे ,,
ढोलाजी रे वाट मां कुतरूं ,,
ढोलाजी रे टाली ने आवजो ,,
रे बाई रे क्यां जाए क्यां आवे ,,
रे बाई रे गेला में कुतरूं पडज्यु है ,,
रे बाई रे तू बीही तो राके हके ,,
ढोलाजी रे मूं तो मारूणी बाजूं ,,
ढोलाजी रे नईं डाकण नईं जोगण ,,
ढोलाजी रे मारूणी आधी ने मजरातां ,,
ढोलाजी रे क्यूं अठ्यां ,,
रे धणीजो मारा भोजन लेइने आवी ,,
रे धणीजी मारा भोजन जीमी लीजो ,,
रे ढोलाजी हाथ मूण्डा धोजो ,,
ढोलाजी भोजन जीमी लीदा ,,
ढोलाजा जीमी ने करी ने ,,
रे मारूणी मनसोबा नी बातां ,,
रे मारूणी सोलो दलनी वातां ,,
रे मारूणी युं तो आणौ आयौ ,,
रे मारूणी हालो ठगियो आयो ,,

रे मारूणी काले मूते जऊं रे ढोला सूनेड़ी
रे मारूणी आवे के नी आवे ,,
रे धणी म्हांरा भला घरना मानवी ,,
रे धणी म्हांरा साना खज्ये जावां ,,
रे धणी म्हांरा राजी खुसी जावां ,,
रे धणी म्हांरा मेंलां वेला आवो ,,
मारूणी बेहु लीनी आवे ,,
रे ढोलाजी रे पीली ने परभातां ,,
रे ढोलाजी रे नार नी मूंछां वाड़ो ,,
रे ढोलाजी मूंछां खल्ये मेलो ,,
रे ढोलाजी वागां नी बावड़ियां ,,
रे ढोलाजी ऊंटिडो संभाल्यो ,,
रे ढोलाजी राई आंगणा मांई जाय रे ,,
रे ढोलाजी ऊंटीड़ो ने बांधो ,,
रे हाराजी रे रामा कसनी करे ,,
रे ढोलाजी रे जाजम नखावो ,,
रे हाराजी जाजमां बेहो ,,
रे जीजाजी तमां जाजमा बेहो ,,
रे हारोजी बंद बोतलां लावो ,,
हारोजी परदा वारी बोतलां लाज्यो ,,
रे ढोलाजी दारू हारूं पीवे ,,

ढोलाजी रे जेरे पावे	ढोला सूनेड़ी
ढोलाजी सक्या थाज्या	,,
रे मारूणी गोखड़े बैठ	,,
रे मारूणीए खबर लागी	,,
रे मारूणी पोताये जेर पाज्यो	,,
रे मारूणी मरदानो सरपाव पेरे	,,
मारूणी धोलां कपड़ा पेरे	,,
मारूणी बिहुलिना रूणेगी	,,
रे मारूणी ऊंटया संभालो	,,
रे मारूणी काठी अड़ावी	,,
मारूणी सोरो बुलावे	,,
मारूणी सांमलो म्हारी बातां	,,
रे सोरां तमाएं पईसा आलूं	,,
रे सोरा तमां हाको करो	,,
रे सोरा ऊंट तो सूटियो	,,
रे ढोलाजी सारां हाका करे	,,
रे ढोलाजी उंट तो जातो रेग्यो	,,
रे ढोलालो बेहुला ने ऊठिया	,,
रे ढोला जरमर जोता अव्या	,,
रे ढोलाजी पड़तो दड़तो आवै	,,
रे ढोलाजी ऊंटीड़ो हंभाले	,,

रे मारूणी ऊंटीडा झखवे ढोला सूनेड़ी
रे मारूणी मंसूबो ने करे ,,
रे ढोलाजी खज्ये माथै बेहे ,,
रे ढोलाजी ते पक्का सकिया वेग्या ,,
रे मारूणी गला की हांसली ,,
रे मारूणी होना री बाडली ,,
रे मारूणी ऊंट ने गोडे गाले ,,
रे मारूणी ढोलाजी नें माथे बेहाडे ,,
रे म रूणी मोरले होदे मारूणी बैठे ,
रे मारूणी फांहलो होदे ढोलाजी बेयाडे ,,
रे मारूणी तीखा रोले ताजणा ,,
रे ऊंटियो जाए रे धामा दौडे ,,
रे ऊंटियो नरवल गढ़ आवी लागू ,,
रे ढालाजी रे मेलां मालम करावी ,,
रे ढोलाजी रे बहरूं बुलावे ,,
रे ढोलाजी रे मोएते मलवे आवजे ,,
वइगी वेहुली आवे ,,
ढोलाजी अतुवारे हभाले ,,
रे वहरा खीला हूई कुटाड्या ,,
रे वइरा ऊट रे पगां मांई ,,
रे वहरे म्हारे ऊंट वगाडी दीदो ,,

रे ढोलाजी रे वइरा्ग गोली वाई ढोला सूनेड़ी
रे वइरी थारा कसूर तोए मारु ,,
रे ढोलाजी गीत जातो मेलो ,,

विरह और प्रकृति के कुछ और गीत अनुवाद सहित इस प्रकार हैं जिनमें राजस्थानी जन जीवन की आत्मा बोलती है:—

(१)

नींबूडो

चाल्या मारूजी जोधाणे रे देस, धंण वारी ओ हंजा ।
जोधाणेरी वाड्या ओ नीबू झुक रह्या जी राज,
हांजी ल्याया पना मारू तुररा जा टांग, वांरा घण वारी ओ हंजा ।
लाय लगाया वी चानण चोकमें जी राज
उग्यो नीबू पान दुपान वारी घण वारी ओ हंजा
उगतडे जुग मोयो ओ गौरी का सायबो जी राज
क्यां से बंधावा नींबडा रो पाल वारी धंण वारी ओ हंजा
क्यां से सिचावां ओ हरिये रूंखने जी राज ।
गुड घी बंधावा नीबूडा री पाल वारी धंण वारी ओ हंजा
दूधां सिचावो ऐ हरिये रूंख जी राज ।
मत कोई तोडो नींबूडे रा पान वारी धंण वारी ओ लंजा
कोई मत न सताओ हरी रूंख ने जी राज ।
नणदल बाई तोडे नींबूडे रा पान वारी धंण वारा ओ हंजा

देवरियो छिनगारो तोडे सोवन माटकी जी राज ।
नणदल बाई ने सासरिये खिनाय वारी धंण वारी ओ हंजा
देवरिये छिनगारे ने राजाजी री नौकरी जी राज ।
नणदल बाई सासरिये न जाय वारी धंण वारी ओ हंजा
देवरिये हठ माड्यो राजा जी री नौकरी जी राज ।
नणदल बाई ने मोतीडां रो हार वारो धंण वारो ओ हंजा ।
देवरिये ने परणास्यां ओ म्हां से छोटी बहनड़ी जी राज
बैठ्या पना मारू तखत बिछाय, वारी धंण ओ हंजा ।
कागद आयो पूरब की नौकरी को जी म्हारा राज ।
कागद पना मारू बांच सुणाय वारी ओ हंजा ।
के रे लिख्यो है वो हंजा कोरे कागदां जी राज ।
कागद गोरी धंण वाच्यो ऐ न जाय वारी धंण वारो ओ हंजा
छाती तो फाटे-ओ हिवडो ऊफले जी राज
ऐवड छेवड सात सलाम वारी धंण ओ हंजा
बीच लिखी है गोरी राजाजी री नौकरी जी राज ।
आलंग थांरे बड़ोडे बीरे ने भेज वांरी धण वारी ओ हंजा
अबके चोमासे ओ राजन घर बसो जी म्हारा राज
बडोड़े बीरे के सात बरस की धीय वारी धण वारी ओ हंजा
बाने परणासी ओ लाड जंवाई घोडे चढ्यो जी राज ।

———

सरलार्थ

उज्जर मरुधरा के धोरों के वासी लोक जीवन को प्रकृति से अपना नैसर्गिक प्रेम है। उसको प्रतीक मान कर वे अपनी मनोगत भावनायें गोपनीय रूप में व्यक्त कर देते हैं राजस्थान में नींबू का वृक्ष प्राकृतिक वरदान है। नायिका कहती है प्रियतम जोधपुर की ओर चलें। वहां बगीचों में नीबू के वृक्ष लहलहा रहे थे। उसमें से वे नीबू की कलम घर ले आए। उसे चनण चौक में लाकर रोपा। सूर्य के उदित होते ही प्रियतम रीझ गया। वह बोला नीबू की पाल कैसे बांधी जाय? इस हरे वृक्ष को कैसे सींचा जाय। प्रात उत्तर मिलता है गुड़ घी से नीबू की पाल बंधाओ और दूध से इसे सींचो। नीबू के पत्ते कोई मत तोड़ो। इस हरे वृक्ष को कोई भी न सताओ। मेरी ननद इस नीबू के पत्ते तोड़ देती है और देवर इसकी टहनी तोड़ देता है। ननद को श्वसुर के यहां भेज दो और देवर को राजाजी की सेवा में भेज दो। ननद सुसराल नहीं जा रही है और देवर ने राजाजी की सेवा में न जाने का हट कर रखा है। ननद को मनाने के लिए मोतियों का हार दो और देवर का सुन्दरी से शादी करवाई जावेगी। मैं अपनी छोटी बहन ब्याह दूंगी। प्रियतम तल्प बिछा कर बैठे थे। पूर्व की सेवा का पत्र आया। प्रियतमा ने पूछा क्या लिखा है? वह बोला प्रिये बड़ी कड़ी आज्ञा है। छाती फट रही है और हृदय उलझ रहा है। कागज में इधर उधर सात सलाम लिखें हैं और बीच में राजकीय सेवा की आज्ञा है। प्रियतमा ने कहा अब के चतुर्मास में अपने बड़े भाई को ही भेजदो। उनके एक बड़ी लड़की है उसे लाड़ले दामाद से शादी करवायेंगे।

(२)

घड़लो

यह बड गहर घुमेर, डालां तो पानां जोबन झुक रह्यो
क्यां से बधावां बड री जो पाल, क्यां से सिंचावां हरिये रूंख ने।
घीव-गुड बधावो बड री जी री पाल दूधां सिंचावों हरिये रूंख ने
मत कोई तोडो बड रा जो पान मत कोई सतावो हरिये रूंख ने
ननदल बाई तोड्या बड़ रा पान, देवरिये छिनगारे तोड़ी साटकी
ननदल बाई ने सासरिये खिनाये, देवर ने खिनावो राजाजी रो चाकरी
ननदल बाई सासरिये न जाय, देवर छिनगारे न जाये चाकरी
ननदल बाई ने मोतीड़ा रो हार, देवरिये ने परणावो म्हां से छोटी बहनड़ी
खाती रा, तू मोल चंदण रो रूंख, काट घड़लाज्ये रङ्ग रो ढोलियो
आया पाया रतन जड़ाव, ईसां ढलावो जाभा इंगलू
चमची र वेभ बणाय, दावण घलावो मखमूल रा
सूवा-वरणी सोड़ भराय, गालमसूरा गादी-गींड़वा
ढोलणी नैं चौबारे चढाय, ढोला-मारूणी दोनूं पोढस्यां
खाती-रा रे असल गिवार, जोड़ी जोरावर, ढोल्यो सांकड़ो
सूता, सइयों निस भर नींद, बाहर हेलो, भंवर कुण मारयो
ओ छै गोरी रेबारो री पूत करहा लदावण हेलो मारियो

रैबारी-रा सोजा मेरा वीर. रैण अंधेरो, करह ढाल दे
गैली बहुवड़ असल गिंवार, करहा लद्योडा अब नडलै
रैबारी रा, सौज्या मेरा वोर, रेण बिछोआ वैरी मत करै
रैबारी रा, होज्यो थारे घोय, रैण बिछोवा गजबी नै कर्यो
सूती सइयां निस भर नींद, जे रे जागूं तो सूतो एकली
सूती सइया, दुपटा जी ओढ़, जे रे जागूं तो ओढ्यो चून्दड़ी
सूती, सइयां, दोये कड़ जाड़ जेरे जागूं तो सूता अेकली
नहीं म्हारे हिवड़े पर हाथ,ना रे सिराणे भंवरजी री बांहड़ी
ना ए सइयां खूंटो भंवरजा रा बंदूक, ना रें बिझंगणी भंवरजी रा
कारड़ा
घुड़ला, सइयां दावै य न ठाण, ना रे पगाणे भंवरजी री
माचड़ो
दासी ए, तूं चौबारे देख, कुण कुण लदिया, कुण कुण बावड़ा
लदिया, बाईजो, थारा ए स्याम, रतन रैबारी रो पाछो
बावड्यो
पवन तूं बैरण, धीमी धीमी चाल, उड़ती दीसै भंवरजी री
पागड़ी
कोयल वैरण, मंधरी बोल, ज्यूं चित आवै भवरजी ने गोरड़ी
पान सुपारी धण रे हाथ, जोसीड़ा ने बूजन राजीड़ा री
धंण गई
कहो ना, कहो ना, जोसीं आ, पतड़े री बात, कद घर आसो
गोरी रो सायबो,

जितना ए गौरी वड पीपल ए पान, उतने दिनों में आयसी सायबो
वालूं जालूं रे जोसी, पतडे रो वेद, आंक धतूरा जोसी थारो मुख भरूं
पांच रुपीया धन रे हाथ आईजो, ने बूझण राजीड़ा री धण गयी
कहो न कहो न, ओ वाइजी. सुपने री वात कद घर आसी धण रो सायबो
आसी, ए भावज, ढलती सी रात, सूती ने, भावज आण जगायसी
रांधा, वाजी, थां ने जिंदवा रा भात, गिरी ए छुहारां बाई जी थारे मुख भरां।
जिमाऊं ओ बाईजो था ने बूरा जी भात, थां रे वीरा री पांत जिमायस्यां,
देस्यां ओ बाई, थां ने मोतीडां ओ हार, काले तो कमके बाई, थांने कांचली
देस्यां ओ बाई. था ने दिखणी रो चीर, हरे किसब रो, बाई जी घाघरो
देस्यां, बाई जी थारे छोटा देवर साथ, भली ऐ जुगत से भेजा सासरे।

सरलार्थ

बड़ का वृक्ष लहलहा रहा है। पत्तों में यौवन फूट रहा है। इसकी पाल किससे बांधी जाय और इसकी जड़ों में क्या सींचा जाय? घी दूध से बड़ की पाल बांधो और दूध से इसको सींचो। ननदबाई ने इसके पत्ते तोड़े। नटखट देवर ने टहनी तोड़ दी। ननद को सुसराल भेज दो और देवर को राजकीय सेवा में भेज दो। ननद सुसराल नहीं जाती और देवर सेवा में जाने को मना करता है। ननद बाई को मोतियों का हार देंगे और देवर को छोटी बहिन ब्याहूँगी। खाती! तू चंदन का वृक्ष मोल लेले, उससे एक रङ्ग महल में बिछाने योग्य खाट घड़ला। उस खाट के पायों पर रत्न की जड़ाव होनी चाहिए, मखमल की दावण डालना, महल में गायकों को महल के चौबारे में चढा कर प्रियतम के साथ महल में विनोद करेंगे। मधुर मिलन की उस रात में सुप्त अवस्था में आवाज आई। प्रियतमा ने पूछा—यह कौन है? "यह रेबारी का पूत है और ऊट लादने के हेतु आवाज दी है।" "मेरे भैया रेबारी के पूत तुम सो जाओ। अंधेरी रात है। "प्रियतमा तुम गंवार हो अब लदावण हित जाना ही होगा।" रेबारी तुम्हारे घर लड़की होगी क्योंकि इस रात को तुमने प्रिय से मुझे बिछोह करवाया है।" सेज पर नींद भर सोई पर जब जागी अकेली थी। मानस में प्रियतम ही बसे थे। ऐसा भान होता था कि मैं दुपट्टा ओढ कर सोई हूँ पर जागती हूँ तो दुपट्टे की जगह चून्दड़ी दिखती है। नायिका पति के विरह में तड़फ रही है।" आज प्रियतम की बंदूक खूंटी पर नहीं है। न भंवरजी के कपड़े ही वहां हैं। प्रियतम के घोड़े आज घुड़साल में नहीं हैं। न भंवरजी

की पादुकाओं के दर्शन ही होते हैं। दासी महल के चौबारे में देख कौन २ लद गये और कौन २ वापस आ गए। "बाई जी तुम्हारे प्रियतम चले गए हैं और रतन रेबारी वापस आ गया है।" "पवन ! तू आज दुश्मन सा लग रहा है। तू धीमे धीमे चल। भंवरजी के साफे का छोर उड़ता दिख रहा है। कोयल, तू धीरे धीरे बोल। तेरी आवाज को सुन मैं प्रियतम को याद आऊंगी। पान सुपारी और पूजा का सामान लेकर प्रियतमा जोशी के घर गई और पूछा प्रियतम कब आयेंगे" जोशी ! बड़ पीपल के जितने पत्ते हैं उतने दिनों में तुम्हारे प्रियतम आयेंगे। जोशी तुम्हारे मुंह में आक धतूरा। ये पोथी पत्र सब जला दूंगी। अपने हाथ में पांच रूपए लेकर वह प्रियतम के आवागमन की खबर ननद से पूछने गई। ननद ने कहा भाभी ढलती रात तक भाई साहब आजायेंगे। वे तुम्हें सोती जगायेंगे। नायिका के हृदय के शत् शत् प्रसून गद गद हो उठे, उसने बाई से कहा तुम्हारे मुंह में घी शक्कर, जिदवे का भात रांधूंगी तुम्हारा मुंह छुहारों से भर दूंगी। तुम्हारे भाई को जिमाऊंगी। बाई इस खुशी में तुम्हें मोतियों का हार दूंगी। एक मूल्यवान दखिणी हरेरंग का चीर देंगे। तुम्हारी अच्छे घर पर शादी करवायेंगे। जहां पर सब कुछ आनन्द मय होगा।

---

(३)

नागजी

नागजी घड़ी दोय घुड़ला थाम रे,

वैरी, घूंघट, री छैयां कर, ओ नागजी

नागजी, तावड़ियो पापी पड़े, हां रे
वैरी, घायल कर दी तावडे, ओ नागजी

नागजी, मन लोभी, मन लालची, रे
वैरी. मन चंचल मन चौर ओ नागजी

नांगजी, मन रे मते य न चालिये रे
वैरी पलक पलक मन और ओ नागजी

नागजी, तड़क तडक मत तोड रे
वैरी, कतवांरी रे तार जिऊं, ओ नागजी

नागजी, ज्यूं टूटे ज्यूं जोड़ रे,
वैरी परीत पुराणी ना पडे, ओ नागजी

नागजी, नागर बेलडी, रे
वैरी, पसरे पण फूले नहीं, ओ नागजी

नागजी, बालक पण री प्रीत रे
वैरी, बिछड़े पण छूटे नहीं, ओ नागजी

नागजी सूती खूंटी ताण, रे
वैरी बतलायो बोल्यो नहीं, ओ नागजी

नागजी, मालपूवे को टूक रे,
वैरी, जीम्या अडियो न तालवे ओ नागजी

नागजी, खायो खजाने रो माल रे,
वैरी, लूण हरामी हो गयो, ओ नागजी

नागजी, अेकबर घुडलो मोड़ रे,
वैरी, मनडे री बातां मैं कहूं ओ नागजी
नागजी भली निभाई प्रीत, रे
वैरी रैन बिछोवो कर चलियो, ओ नागजी
नागजी, रमता ऐक-ज संग रे
वैरी. रेण विछोवो तें करियो, ओ नागजी
नागजी, सोतां एक पलंग रे
वैरी, न्यारा न्यारा त करया, ओ नागजी
नागजी, टीकी फीकी पड़ गयी रे
वैरी, कजलो बह गयो नैन को, ओ नागजी
नागजी, होये अमुंगी बावली रे
वैरी नयणां वरसे मेह जी, ओ नागजी
नागजी, माखणडो सौ तै लियो रे
वैरी, रह गयी खाटी छाछ रे ओ नागजी
नागजी, अेकबर मुखड़े बोल रे,
वैरी, आस निरासी मत करं, ओ नागजी

सरलार्थ

धोरां की धरती के तपे वातावरण में नायिका अपने प्रेमी नागजी से कहती है "नागजी दो घड़ी ही सही अपना घोड़ा थामलो, मैं अपने घूंघट की छाया कर दूं। प्रियतम नागजी! सूर्य की धूप तेजी से पड़ रही है। उसने

मुझे घायल कर दिया है नागजी। यहमन लोभी है, लालची है, चंचल है और चोर है। इस मन के कहे पर नहीं चलना चाहिए। तार के टुकड़ों की तरह तू स्नेह को मत तोड़। प्रेमी तो ज्यों टूटता है त्य त्यों स्नेह बंधन जोड़ता है, प्रीति कभी भी पुरानी नहीं पड़ती। उसका असर सदैव ताजा रहता है। नागरबेल पसरती है पर फूलती नहीं। नागजी बचपन की प्रीति बिछुड़ती है पर छूटती नहीं। नायिका अति ममतावश अपने प्रियतम की उपेक्षा देख कर कहती है- दुश्मन नागजी ! तू खूंटी तान कर (कपड़ा ओढ कर) सोता है। मैं तुझे बुलाती हूँ पर बोलता नहीं। नागजी मालपुरू (एक प्रकार का मिष्टान्न) का टुकड़ा खाया पर ताजते भी न अड़ा। प्रियतम तुमने जीवन का खजाना लूट लिया उसे खा गए और आज तुम कृतज्ञता बिसार गए हो (लूणहरामी) नागजी, एक बार अपने घोड़े का मोड़ो मन की बातें करो। दुश्मन ! तुमने अच्छा प्रीति निभाई ? सुरंगी रात को बिछुड़ कर चल दिया। प्रियतम नागजी। अपन साथ खेलते थे। पर दुश्मन तू सब रङ्ग फीका कर गया। एक साथ रहते थे पर रात बिछोह तेने किया। एक साथ ही अपन सोते थे। तुमने अलग अलग कर दिया। नागजी हिंगलू की टीकी फीकी पड़ गई है। आंखों का काजल तुम्हारे विरह में रोते २ आंसुओं से बह गया है पूर्व दिशा में बादली उमड़ आई है। नयनों में आंसुओं का मेह उमड़ आया है। प्रियतम ! प्रियतमा का यौवन रस तुमने लूट लिया। माखन तुम खा गए अब तो छाछ रह गई है। बैरी एक बार घोड़े की बाग मेरी ओर फेर दो। आशा को निराशा में मत बदलो।

———

(४)

सूवटो

सूवा, नरवर जायगो तूं हो ओ
सासू सुसरै जी न कहियै पगां रे लागना
नणदल नै याद कहीओ
सूवा, नरवल जायगो तूं ही ओ
परण्ये ने कहिजै, सूवा, सात रे सलामी
देवर ने प्यार सही ओ
सूवा, नरवल जायगो ही ओ
घर गुजरी कै सूवा वासो रे लीजै
घालैगी दूध दही ओ
सूवा नरवल जायगो तूं ही ओ ।

सरलार्थ

अपने पिता के यहां से नायिका तोतेके साथ सुसराल संदेश भेजती हुई कहती है-हे तोता ! तू नरवल जान। मेरी सास श्वसुर को चरण वंदन कहना। मेरी ननद को मेरी मधुर स्मृति। मेरे प्रियतम को मेरी सात सलाम कहना और उनके छोटे भाई को प्यार। गूजरी के घर जाकर वास करना वहा वह तुम्हें दूध दही खिलाएगी

---

(५)

सूवटा

सूवटा, पीव मिला दै रे
सूवटा, मारुजी मिला दै रे
तेरो जलम-जलम गुण गांस्यूं
सूवा, म्हारो भंवर दिखा दे रे।
गौरी, म्हां ने पतो वता द्यो रे
गौरी, म्हांने पतो बताद्यो रे
हां ऐ, थारो बिछड्यो कंथ मिलावां
सुगणी, म्हां ने देस बताद्यो ऐ
सूवा, बंगाले जाजे रे
सूवा, बंगाले जाजे रे
कोई बंगाले रे मांय
भंवर रो पतो लगाजे रे
ल्यावो ल्यावो कोरो कागदियो
सरे, ल्यावो ल्यावो कलम दवांत
कोई, लिख परवाणों म्हारे गल बांधो
उड़ जास्यां परभात
उड़ियो उड़ियो सूवटो
सरे, जा पूंच्यो बंगाल
सूवटो जा पूंच्यो बंगाल

बंगाले री बागां में जा बैठयो अमवां री डाल
साथीड़ा रे साथ में
स रे, आयो गोरी रो स्याम
राम जी आयो गोरी को स्याम
घूमते झूमत आं बैठियो
हरिये अमवां री छांव
चक्कर खा के सूवटो
स रै, पड्यो धरा के मांय
रामजी, गिर्‌यो धरा के मांय
साथीड़ा तो पाछा हट्या
स रे, राजन लियो उठाय
गले से खोल्यो कागदियो
स रे, सुवटें खायी उड़ान
रामजी सुवटें खायी उड़ान
राजन देखती रह गया
स कोई, सुवटो बैठो डाल
गवड छेवड़ ओलमा
स रे, विच विच सात सलाम
रामजी विच विच सात सलाम
पढ़ परवाणूं वर नार री
स रे, राजन भयो उदास

सुण ल्यों, रे साथ्यां वोनती
स म्हारी, मानों सात सलाम
रामजी म्हारी मानों सात सलाम
म्हें जास्या म्हारे गांव ने
स रे, म्हारे घर छै काम ।

सरलार्थ

"सूवटे मुझे अपने प्रियतम से मिलादे। मैं जन्म-जन्मतर तुम्हारे गुण बखान करूंगी। मेरे भँवर (प्रियतम) से मिला दे" सुन्दरी ! तुम मुझे अपने प्रियतम का पता बता दो। मैं तुम्हें अपने बिछुड़े प्रियतम से मिला दूंगा। सुलक्षणी नारी तुम मुझे अपना देश बता दो। "सूवटे तुम बंगाल जाना और वहां जाकर मेरे प्रियतम का पता लगाना कोरा कागज लाओ, कलम और दवात लाओ उसमें प्रियतम के नाम संदेश लिख कर सूवटे के गले बांध दो।" सूवटे ने कहा मैं प्रभात को उड़ जाऊंगा। सूवटे ने पङ्ख पसारे। वह बंगाल जा पहुँचा बंगाल के बाग में जाकर वह एक आम की डाल पर जा बैठा। वहां पर प्रियतमा का प्रियतम अपने साथियों के साथ आया। घूमता घूमता वहउस आम की छाया में आ बैठा। चक्कर खाकर धरती पर गिर गया। साथी लोग तो अलग हो गए पर प्रियतमा के प्रियतम ने उसे उठा लिया। गले में बांधा हुआ कागज खोला इतना होते ही तोता उड़ गया। सभी आश्चर्य से देखते ही रह गए।वह उड़ कर डाल पर बैठ गया। भंवर ने पत्र खोला। उसके अन्दर प्रियतमा की ओर से प्रियतम को उपालम्भ लिखे

हुए थे। और प्रियतम को बहुत बहुत सलाम लिखो थी। अपनी प्रेयसी का पत्र पढ़ कर प्रियतम उदास हो गया। उसने कहा साथियों मानो तो सही बात यह है कि मुझे प्रियतमा याद कर रही है। मैं अब जाऊंगा। मेरी सात सलाम स्वीकार हो।

राजस्थान के लोक जीवन के पक्षियों को भी अपने जीवन के हर्ष और दुख का संगी बनाया है। प्रकृति के हर उपकरण ने उन्हें प्रेरणा दी है।

---

(६)

संदेशा

उड़ज्या रे काग गिगन के वासी
खबर तो ल्याव म्हारे राजन की
नांव नहीं जाणूं, मैं तो गांव नहीं जाणूं
सूरत न जाणूं थारे राजनकी
नांव बतास्यां, गांव बतास्यां
सूरत बतास्यां म्हारे राजन की
तीखी तीखी नाक, फिरङ्गी को नौकर
चाल चलै अमरावां की
उड़ ज्या रे काग गिगन के वासी
खबर तो लियाव म्हारी गोरी की
नांव नहीं जाणूं, मैं तो गांव नहीं जाणूं
सूरत नहीं जाणूं थारी गोरी की

नांव बतास्यां, गांव बतास्यां
सूरत बतास्यां म्हारी गौरी की
लांम्बा—लांबा केस, मिरग का—सा नेतर
चाल चलै ठकराएया की ।

सरलार्थ

काग को नायिकायें संदेश वाहक मानती हैं। प्रस्तुत गीत में एक विरहणी अपने प्रियतम को संदेश देने के हेतु काग से आग्रह करती हुई कहती है "गगन के वासी काग ! तू उड़ जा और मेरी प्रियतम की सूचना तो ला। काग उत्तर देता है" मैं तुम्हारे प्रियतम का नाम नहीं जानता, गांव नहीं जानता न उनकी सूरत ही पहचानता हूँ।" "नाम बताऊंगी गांव बताऊंगी और उसकी सूरत भी बताऊगी। मेरे प्रियतम की नाक तीखी है। अंग्रेजों की वह सेवा करता है और बड़े आदमियों की चाल चलता है। काग ! तू उड़जा और मेरे प्रियतम का सदेश लाकर मुझे दे।" उधर प्रियतमा के विरह में व्यथित प्रियतम भी दूसरे काग से कहता है।" तू मुझे अपनी प्रियतमा का संदेश लाकर दे। मैं नाम नहीं जानता गांव नहीं जानता और तुम्हारी प्रियतमा की सूरत भी तो नहीं पहचानता।" "नाम बताऊंगा और उसकी सूरत भी बताऊंगा उसके लंबे लंबे केश हैं। मृग से नयन और ठकुरानियों की सी चाल चलती है।

---

(७)

पपईयो

पपैया, तू बोल रे जित म्हांरे आलीजे भंवर रो मुकाम
सावण आयो, सायबा, वने झिगोरत मोर
कालिंगडो कू कू करे, म्हारे, करत कोयलड़ी सोर
पपैया तू बोल रे जित म्हारे आलीजे भंवर रो मुकाम
सावण आयो, सायबा, वेलाँ झुर रहा बाड़
चातक झुर रह्यो मेघ ने, पिव ने झुर रही नार
पपैया तू बोल रे जित म्हारे आलीजे भंवर रो मुकाम
सावण आयो, सायबा, कहो य तो पीवर जाय
पग पग पाणी पालरो, वादलियां री छाय
पपैया तू बोल रे जित म्हारे आलीजे भंवर रो मुकाम।

सरलार्थ

विरह व्यथित नायिका पपैया से कहती है—"निर्मम तू उस जगह बोल जहां मेरे मद मरे भ्रमर प्रियतम का मकान है। प्रियतम सावन आ गया है। वह मेरा चीर अपनी सरस बूंदों से भिगो रहा है। कोयल भी तो शोर मचा रही है। उसकी वाणी भी नहीं सुहाती। पपैया! तू यहां न बोल। मेरा विरह जाग रहा है। तू प्रियतम के वहां जाकर बोल। हे प्रियतम! सावन आगया। बाड में उलझी बेलें झुर रही हैं। चातक स्वांति

बूंद के हेतु मेव को भर रहा है और प्रियतमा तुम्हारे विरह में भर रही है। सावन आ गया है कहो तो पीहर चली जाऊं पर पग पग पर वर्षा का पानी भरा है और बादल उन पर छाया किए हुए हैं। पपैया तू उस जगह पर जाकर बोल जहां, प्रियतम है।

---

(८)

वर्षा

मेरा मन मारूजी मिलबा ने
जेठ असाड आसा हूं काड्या, तो सावण आयो झुरबा ने
मेरा मन मारूजी मिलबां ने
पहलो पख सावण को लाग्यो, तो लाग्या भद्दावुडो उडवा ने
मेरो मन मारूजी मिलबा ने
नान्हो-नान्ही बूंदी मेवडो बरसे, तो लागी बादली गरज्या ने
मेरो मन मारूजी मिलबा ने
पूरब दिशा हूं ऊठी बादली, तो आई म्हारे घरां बरसवा ने
मेरो मन मारूजी मिलबा ने
लिख परवाणूं म्हारे मारूजी ने देस्यां, तो एक बार आवा मिलबा ने
मेरा मारूजी हूं मिलबा ने।

सरलार्थ

प्रस्तुत गीत भी विरह की भावनाओं से ओत-प्रोत है। नायिका कहती है मेरा हृदय (मारूजी) अर्थात् प्रियतम से मिलने को बहुत उतावला हो रहा है। ज्येष्ठ और आसाढ़ के महीने उनके मिलन की आशा में बिताए अब सावन बरसने को आया है। मेरा मन प्रियतम से मिलने के लिए आतुर है। सावन का प्रथम पक्ष लग गया और भादों महीना भी बरसने आ गया है। मेरा मन उनसे मिलने को उतारू है। पूर्व दिशा से उठी हुई बादली मेरे घर बरसने आई हैं, पर मेरा हृदय उनसे मिलने को व्यग्र है। मैं एक पत्र लिखूंगी अपने प्रियतम को। प्रियतम ! अब तुम मुझ से मिलने आ जाओ मेरा मन तुम से मिलने को उतावला हो रहा है।

---

(६)

बरसात

घर र घर र घरराबे
ऐ सहेली म्हारी गरजत बदली आवे
चम चम चम चम चमके बिजलियां ठण्डो लहर सुहावे
ऐ सहेली म्हारी गरजत बदली आवे।
झिर मिर झिर मिरि मेहूड़ो बरसे म्हारो मन हरखावे।
ऐ सहेली० ॥

थारो पियो थारे घर ऐ बसै छै म्हारो बसै परदेस
ऐ सहेली म्हारी मिलबा ने जिव ललचावे ॥ ऐ सहेली० ॥

सरलार्थ

सावन की सरस बूंदे जब नायिका को छूती है तो सुपुप्त यौवन अंगडाई लेकर जाग उठता हैं ! उमड़ उमड़ कर गाजते आते बादलों को देख कर नायिका कहती है—घर घर गहराती बदली आ रही है। हे सहेली ! बिजलियाँ चम चम चमक रही हैं और सरस वायु के झकोरे इस समय अति सुहावने दृष्टिगत हो रहे हैं। इस रिम झिम करती हुई वर्षा में मेरा मन हर्ष में डूब गया है। पर सहेली, मेरा प्रियतम तो परदेश है और तुम्हारे प्रियतम घर पर हैं। मैं अपने प्राणनाथ से मिलने के लिए अति इच्छुक हूँ।

———

(१०)

सावण बरसात

तू क्यूं ऐ मेडी वैरण डगमगो
तेरी लगी ऐ धरम की नीम
एक दिन राजन खड्या ऐ चिणावता
रावटी पुराणी हो गई जे
हां जी कोई टपकण लाग्या जूण
अब घर आवो गौरी का सायबा जे
पिलंग पुराणा भंवरजी होय गया जे
हां जी कोई तड़कण लाग्या साल
अब घर आवो सुंदर रा सायबा जे

हिंगलू में जालो भंवरजी पड गयो जे
हांजी मारू कजले में पड गया सेवाल
अब घर आवो अंधेरे घर का पावणाजी
सावण आवण भंवरजी कहाया जे
हांजी कोई बित्या बारा मास
अब घर अमवो अंधेरे घर का चानणा जे
पीपल झुरे भंवरजी फूल ने जे
हां ऐ कोई फल ने झुरे ऐ फरास
गोरी बी झुरे अपणे स्याम ने जे
झुर झुर मारूजी में पिंजर हो गई जी
हां जी कोई बिद्रंग होग्यो भेस
अब घर आज्या अंधेरे घर का चांदणा जे।

सरलार्थ

राजस्थान का लोक जीवन अपने मनोभावों में अपनी मौलिक अभिव्यक्ति रखता है। प्रस्तुत लोकगीत एक विरह व्यथित नारी के मुख से मुखरित हुआ है। प्रेमी से बिछुड़े बरस बीत गए वह घर नहीं आया। बिरह की घड़ियों में सभी प्रमोद की चीजें अतीत की मदमाती स्मृतियों को सजग कर देती हैं। बरस बीत गये। पति ने जो महल (मेड़ी बनवाया था वह डगमगाने लगी। नायिका उससे प्रश्न करती है तू क्यों डगमगा रही है। तेरी नीव तो धर्म से लगी है अर्थात् तेरा निर्माण शोषण से नहीं हुआ।

मुझे याद है एक दिन प्रियतम तुझे खड़े खड़े चुन वाते थे अब रावटी पुरानी हो गई है। प्रियतम घर आओ। यह सेज का पलंग भी तो पुराना पड़ गया और उसकी इते तड़कने लगी हैं मेरे नाथ अब तो घर आओ। हिंगलू की डिब्बी में जाले जम गए हैं। तुम्हारे बिना मैं शृंगार करूं तो भी कैसे ? आंखों के अंजन की भी तो वही स्थिति है। साजन ! तुम इस अंधेरे घर में अतिथि के रूप में भी आओ अवश्य आओ। सावन मे आने का आप कह गए थे पर एक पूरा वर्ष बीत गया। अंधेरमय जीवन के प्रकाश ! अब तो घर आओ। गीत की अंतिम पंक्तियों में विरह साकार हो उठा है। प्रेमिका कहती है–पीपल के फूल झरने लगे हैं, पलास के फूल झर रहे हैं। यह सुन्दरी, तुम श्याम रूपी प्रियतम के विरह में झुर झुर कर मर रही है। झुर झुर कर वह अस्थि पंजर मात्र रह गई है। सारा चेहरा बदरंग हो गया है। अंधेर मय जीवन के प्रकाश ! अबतो घर आ जाओ।

———

(११)

गीत

मेरो पीडो रीतो ओ बाबला
कूण भरेगो तेरी धीय बिना
तेरी भाभ्यां भरेगी तेरो पींडो
लाडी बैठी जाय घरां
मेरो गोबर ग्वाडे पसरयो ओ बाबल

कूण उठावेगो तेरो धीय विना
तेरी भाभ्यां उठावै तेरो गोबर
लाडीबेटी जाय घरां
मेरी गायों बंधी छै ठाँण
कुण खोलेगो बाबल तेरी धीय बिना
तेरो भाई खोलेगो तेरा गायां
लाडी बेटी जाय घरां
मेरो दही पड्यो बिना बिलोयां
कूण बिलोवैगो बाबल तेरी धीय बिना
तेरी भाभ्यां तेरो दही बिलोसी
लाडी बेटी जाय घरां
मेरा वाछा रमे छे गो ठांण
कूण चुघांवै बाबल तेरी धीय बिना
तेरी भाभ्भां चुंघासी तेरा बाछड़ा
लाडी बेटी जाय घरां
मेरो कूण लावेगो घास
ओ बाबल तेरी धीय बिना
तेरो भाई लावेगो घास
लाडी बेटी जाय घरां
मेरी कूण करेगो रसोई
ओ बाबल तेरी धीय बिना

तेरी भाभ्भां करेली रसोई
लाडो बेटी जाय घरां
मेरो कूण खिलावेगो भतीज
ओ बाबल तेरी धीय बिना
तेरी भाभी खिलावै बाबियो भतीज
लाडो बेटी जाय घरां
तने बाबल कूण कहेगो
ओ बाबल तेरी धीय बिना
आंसू तो भर आया नेना में
ओ लाडो बेटी जाय घरां।

सरलार्थ

राजस्थान के ग्राम के ग्राम गीतों में वहां के जन जीवन का सजीव चित्र है। कृषकों के ये गीत उन परिवारों में घुल गए हैं। बेटी सुसराल जा रही है उसे रह रह कर अपना विगत बाल्य काल याद आता है। वह अपने पिता से कहती है-पिताजी घर में पानी कौन भरेगा? रोज बिखरने वाला गोबर कौन उठाएगा? पशुओं को ठाण से कौन खोलेगा। दही बिना बिलोए पड़ा है। बछड़े गायों के ठाण में खेल रहे हैं उन्हें कौन खिलाएगा और चुघाएगा। रसोई कौन करेगा? तेरी मवेशी के लिए घास कौन खिलाएगा? प्रति उत्तर में लड़की का पिता अति दुलार से आंखों में आंसू भर कर अति ममता भरे शब्दों में कहता है ये सब कार्य तेरी भोजाइयें और भाई करेंगे। तुम सहर्ष ससुराल जाकर अपने कर्तव्य का पालन करो।

(१२)

ग्राम गीत

सहेल्यां, मन में वैश्रा ऐ
मन मांय आवै, ऐ सहेल्या, मन में आवें
कदेयक तो म्हे पीवरिया में नित उठ मौज उडाय
मायड़ म्हांने गले लगाती बाबो सा लाड लडाय
पोर चढ्यां दिन माय जगाती सूती गुदड़ाँ माय
आंख धोय म्हारो मुखड़ो धोती वै पल वीत्या जाय
दही मां डयो करयो ऐ कलेवो गुडियां लीनी काढ
सात सहेली खेलण आयी म्हारा आंगण मांय
छाक भयी माय करी रसोई दीनो थाल लगाय
जद बाबोसा जीमण लाग्या लीनो हेलो मार
सहेल्या वै दिन वीत्या ऐ, सहेल्या, म्हारे मन में आवै ऐ।

सरलार्थ

बहूरानी सुसराल की सखियों को कहती है–सहेलियां! मुझे अपने पिता का घर याद आता है। मैं अपने पिता के यहां पर आनन्द से रहती थी। मेरा मन होता तभी बिस्तर से उठती थी। मैं मक्खन और दही का कलेवा

करती थी। शाम होता रसोई पकती, पिताजी जब जीमन करते थे तो मुझे अपने साथ भोजन करने को पुकारते थे। पर अब वे स्मृतियाँ ही शेष रह गई हैं।

---

(१३)

ग्राम गीत

लटको आयो जी स्याम जगाई क्यूंनी जी लटको आयो
जगाई क्यूंनी जी स्याम लटको आयो
सारे सारे दिन में खेत म प यी जी
स्याम पड्यो घर आयी मेरा स्याम
लटको आयो जी
लटको आयो स्याम जगाई क्यूंनी लटको लायो
मण भर धागडो में फिर घर ल्याई जी
गाद मेरी हालरियो मेरो स्याम
लटको आयो जी
लटको आयो जी स्याम जगाई क्यूंनी लटको आयो
भैंस नीर गायों ने नीरी
मण भर दूधड़लो निकाल्यो मेरा स्याम

लटको आयो जी
लटको आयो जी स्याम जगाई क्यूं नी
लटको आयो जी।
दोए घडी तो खीचड़ रांध्यो
सारो सारो कुटंब जीमायो मेरा स्याम
लटको आयो जी।
लटको आयो जी जगाई क्यूं नी मेरा स्याम
लटको आयो जी।
चौको उठा में गुड़ो पिलंग पर
पडतो ने लटको आयो मेरा स्याम
लटको आयो जी।
लटको आयो आयो जी स्याम जगाई क्यूं जी लटको
आयो।

सरलार्थ

प्रियतम ! तुम आए में सोई हुई थी। जगाया क्यों नहीं ? सारे दिन खेत में परिश्रम किया। शाम को घर आई आते ही थकी थी अतः नींद की लहर आगई। मैं मन भर घास घर पर लाई हूँ। मेरी गोद में बच्चे का

हालरिया था। भैंस और गायोंकी दुहारी की। मन भर दूध निकाला। दो घड़ी तक खीचड़ा पकाया, सारे कुटंब को जिमाया, चौका उठाया और सो गई। प्रियतम ! झपका आगया। तुमने जगाया क्यों नहीं ?

———